वार्षिक मूल्य ३),] ~ अप्रेल सन् १९५७ ई० [एक अङ्क का ।).

* ज्योति-याचना *

(श्री० सुमित्राकुमारी सिनहा.)

ले गीत-फूल पूजा का थाल सजाया है,
पर बिना ज्योति के अन्धियारा यह कौन हरे ?
यह अगम तिमिर का सिन्धु एक लौ, तृण-सम्बल,
पर जीवन यह, आधार बिना कितना निर्बल ?

है शक्ति पगों में, किन्तु प्रेरणा कौन भरे ?
अब बिना ज्योति के अन्धियारा यह कौन हरे ?

ले संचित निर्माल्य, अर्चना करने जाती,
पर अन्धकार में डूबी, पन्थ नहीं पाती ।
इस कलुष-कालिमा से निवृत्ति अब कौन करे ?
अब बिना ज्योति के अन्धियारा यह कौन हरे ?

यत्न-दीप माटी का, अनुभव-आंच पका कर,
स्नेह-भावना भर, बाती यह प्राण बना कर—
मैं व्यथा, ताप से जला रही, पर ज्योति परे ।
अब बिना दीप के अन्धियारा यह कौन हरे ?

दो ज्योति-दान, मैं दीप लिए दिशि-दिशि जाऊँ,
तम हर घर के कोने-कोने का धो आऊँ,

इस ज्योति-पर्व पर आज याचना कौन करे ।
पर बिना दीप के अन्धियारा यह कौन हरे ?

धर्म की मूल भूत एकता

(श्री० स्वामी रामतीर्थ)

नवीनता, प्रतिष्ठा या लोक प्रियता प्राप्त करने की इच्छा प्रायः लोगों को सत्य के मार्ग से विमुख रखती है। इस प्रकार की इच्छा को छोड़ कर और मस्तिष्क को साम्य अवस्था में रखकर अर्थात न उदासी में निराश होकर और न आत्म प्रशंसा के बादलों में उड़ कर यदि हम भारतवर्ष की वर्तमान आवश्यकताओं के प्रश्न पर विचार करते हैं तो भारत की शोचनीय दशा से हमारी मुठभेड़ हो जाती है, जिसमें एक ही पवित्र भूमि में रहने के सम्बन्ध और स्नेह की बिलकुल परवाह नहीं की जाती। हममें अपने पड़ौसियों के प्रति प्रेम का शोचनीय अभाव है। धार्मिक सम्प्रदायों ने सच्चे मनुष्यत्व को और इस भाव को कि हम सब एक ही राष्ट्र के अंग हैं, ढक दिया है।

हिन्दुस्तान में मुसलमानों को हिन्दुओं के साथ एक ही जगह रहते हुए पीढ़ियों पर पीढ़ियाँ व्यतीत हो गयीं, परन्तु अपने पड़ोस में रहने वाले हिन्दुओं की अपेक्षा वह दक्षिण यूरोप के तुर्कों के साथ सहानुभूति दिखाते हैं। एक बालक जो हिन्दू माँ-बाप के रक्त मांस से बना है, ज्यों ही ईसाई हो जाता है त्यों ही वह एक गली के कुत्ते से भी ज्यादा अपरिचित बन जाता है। मथुरा का एक कट्टर द्वैतवादी वैष्णव दक्षिण के एक द्वैतवादी वैष्णव के लाभ के लिये अपने ही नगर के एक अद्वैतवादी वेदान्ती का मानभंग करने के लिये क्या नहीं करता? यह सारा दोष किसका है? मत-पन्थों के पक्षपात और खोखले ज्ञान का, जो सब जगह एक सा है। भारत में एक राष्ट्रीयता की कल्पना भी एक अर्थहीन कल्पना हो गयी है। इस का कारण क्या है? इसका स्पष्ट कारण मरे हुए मुर्दों की लकीरों से अंधे होकर फकीर हो जाना और ऊटपटांग पक्षपातों की, जो धर्म के पवित्र नामों से पुकारे जाते हैं, घोर दासता है! या यों कहो कि—"प्रमाण-पालन" चिकना चुपड़ा नाम देकर अध्यात्मिक आत्मघात करना है।

केवल उदार शिक्षा, यथार्थ ज्ञान, सप्रयोग परीक्षण अथवा दार्शनिक विचार-पद्धति के अभ्यास से ही यह असत्य कल्पना दूर हो सकती है, और कोई मार्ग नहीं। आधुनिक शास्त्र शोधन से निकले हुए उत्तम और मनुष्य कर्तव्य सिखाने वाले तत्व जिस पंथ या धर्म में न हों, उन्हें कदापि यह अधिकार नहीं है कि वह अपने भोले भक्तों को अपना शिकार बनावें।

प्राचीन काल के बहुत से धार्मिक तत्व और प्रथायें, केवल उस समय के जाने हुए शास्त्रों के सिद्धान्त और नियम थे। ये तत्व पहले बड़े विरोध के साथ माने गये थे और फिर इस अन्धविश्वास के साथ माने गये कि उनकी जन्म देने वाली माता स्वतन्त्र विचारकता और निदिध्यासन का गला घोंट दिया गया। धीरे-धीरे यह अन्धविश्वास इतना बढ़ गया कि एक बालक "मैं मनुष्य हूँ" यह समझने के पहले ही अपने को हिन्दू, मुसलमान अथवा ईसाई कहने लगा। जब मत-मतान्तरों पर चलने वालों के आलस्य, जड़ता और अज्ञानता के कारण व्यक्ति विशेष तथा ग्रन्थों के प्रमाण के आधार पर धार्मिक रीति रिवाज माने और स्वीकार किये जाने लगे और जब स्वयं अभ्यास, मौलिक अन्वेषण, सत्यानुशीलन और ध्यान इत्यादि, जिन से धर्म-संस्थापकों ने आध्यात्मिक और आधि भौतिक प्रकृति तथा उसके नियमों का दक्षता के साथ अध्ययन किया था, लोप होने लगे तब सृष्टि के नियमानुसार धर्म की अवनति आरम्भ हो गयी। शनैः शनैः ईसामसीह के गिरि प्रवचन अथवा वैदिक यज्ञों के असली उद्देश्यों को तिलाञ्जलि दी जाने लगी और इन मत-मतान्तरों के चलाने वालों के नामों की पूजा बड़ी श्रद्धा से

होने लगी। केवल इतना ही नहीं हुआ वरन् देह की पूजा के लिये देही का हनन कर दिया गया।

ईसा, मुहम्मद, व्यास, शंकर इत्यादि सत्य निष्ठ और निष्कपट महात्मा थे। उन्होंने प्रकृति रूपी मूल ग्रन्थ के अनन्तत्व का अध्ययन कर आंशिक ज्ञान प्राप्त किया और उसके अनुसार धर्म ग्रन्थ लिखे, किन्तु उनके अनुयायी उन्हें पैगम्बर और अवतार का नाम देकर उनकी वाणी को 'आदि सत्य' 'युगादि सत्य' सत्य हो भी सत्य' मान कर उसकी व्याख्या करते हैं, जो निश्चय ही प्रकृति के मूल ग्रन्थ के विरुद्ध (असत्य और अपूर्ण) है और ऐसा करके वे अज्ञानवश अपने गुरु और उनके ग्रन्थों का अपमान करने कराने का कारण होते हैं।

इसका अभिप्राय यह नहीं है कि लोक संग्रह के लिये इन धार्मिक रीतियों का कभी उपयोग ही न था। किसी समय उनका उपयोग अवश्य था। इन रीति-रिवाजों की आवश्यकता ठीक वैसी ही थी जैसे किसी बीज के जीवन और बाढ़ के लिये यह आवश्यक है कि वह बीज छिलके से कुछ काल तक ढका रहे। परन्तु नियमित समय के पश्चात् यानी उस बीज के उग जाने पर अगर वह छिलका नहीं गिरे तो वह बढ़ते हुए दाने के लिये एक कारागार बन जायगा और उसकी बाढ़-विकास को रोकेगा। इसमें छिलके की अपेक्षा दाने पर विशेष ध्यान रहना चाहिये क्योंकि छिलके को जो, दाने की बाढ़ को रोकता है अलग कर देने के लिये अर्थात्— जीर्ण, अनुपयोगी रीति-रिवाजों के पालन करने के विचारों से छुटकारा पाकर प्रकृति के मूल ग्रन्थों को पढ़ने के लिये यह अनुभव करना आवश्यक है कि पैगम्बरों की शक्ति अलौकिक नहीं है, वह हमारा (प्रत्येक मनुष्य का) जन्म सिद्ध अधिकार है।

कुछ लोग ऐसे हैं, जिनकी समझ में किसी मकान का ढाँचा या नकशा उस समय तक समझ में नहीं आता जब तक कि मकान बन कर उनके सामने तैयार न हो जाय। इसी प्रकार के कुछ लोग ऐसे हैं, जिनके ध्यान में वर्त्तमान काल या भूत काल से एक परमाणु भी आगे बढ़ने का विचार नहीं आता, पर अब भारत वर्ष में ऐसे लोगों की संख्या बहुत न्यून होती जाती है। दर्शनशील वेदान्त का अभिप्राय यह है कि लोगों की ढुलमुल यकीनी (श्रद्धा और विश्वास) अशान्ति और चंचलता दूर करके उन्हें उनका स्वाभाविक ऐश्वर्य, एकता और विश्वप्रेम का अनुभव करावे तथा अस्वाभाविक विकृत भेद-भावों के स्थान पर स्थायी एवं स्वाभाविक मेल कराये। ऐसे वेदान्त की किस देश में आवश्यकता नहीं है? भारत वासियों को तो इस की विशेष आवश्यकता है।

※ अद्वैतवाद या सर्वेश्वरवाद ※

(ओ० सी० जिनराजदास)

"यह सब कुछ ब्रह्म ही है"—यह अद्वैतवाद या सर्वेश्वरवाद है। यह सिद्धान्त किसी न किसी रूप में प्रायः सब धर्मों में पाया जाता है। जब हम वस्तु-मात्र के मूलतत्व का विचार केवल निराकार निर्गुण रूप से नहीं परन्तु एक साकार सगुण ब्रह्म रूप से करते हैं तब प्रत्येक धर्म में यह तत्व दो रूप से व्यक्त होता है। इन्हें हम प्रभु के सर्वातीत और सर्वत्र रूप के नाम से जानते हैं।

सर्वेश्वरवाद का बिलकुल स्पष्ट रूप हिन्दू धर्म में देखा जाता है। 'श्वेताश्वेतर उपनिषद्' के नीचे के मन्त्र प्रभु के सर्वव्यापक स्वरूप के सिद्धान्त को व्यक्त करते हैं। हिन्दू धर्म में यह स्वरूप सगुण ब्र

समूर्त ईश्वर की दिव्य सत्यता (रियलिटी) है:—

"यह देव सब दिशाओं में है, वह बहुत पूर्व-जन्मा था, वह गर्भ में है, वह जन्म ले चुका है, वह जन्म लेवेगा, सब जन्मे हुओं के पीछे वह खड़ा है। वह सर्वतोमुख है।" (२-१६)

"सब के मुँह, शिर और गरदन जिसके हैं, जो सब भूतों (जीवों) के गुहाशय में स्थित है, जो भगवान सर्वव्यापी है। इसलिये वह सर्व स्थित शिव (कल्याणकारी) है। (३-१४)

वह ही अग्नि है, वह आदित्य है, वही वायु है, वह ही चन्द्रमा है, वही शुक्र, वही ब्रह्म, वही आप (जल), वही प्रजापति है। (४-२)

तूही स्त्री, तूही पुरुष, तू ही कुमार, तू ही कुमारी है। तू ही बूढ़ा हो कर लाठी पकड़ कर चलता है और तू ही सब ओर मुख करके जन्म लेता है।

(४—३)

नीली तितली, हरा पक्षी, लाल रंग का पशु, बिजली को गर्भ में धारण करने वाला बादल, जन्तु और सब समुद्र इन सब का अनादि रूप तू है। सर्व व्यापी शक्ति में तेरा घर है, जहाँ से सब भुवन और विश्व निकले हैं। (४-४)

इसी श्वेताश्वेतर उपनिषद् में नीचे लिखे श्लोक भी हैं जिनसे प्रकट हो जाता है कि हिन्दू विचारकों ने भगवान के सर्वातीत और सर्वव्यापक स्वरूपों का किस प्रकार समन्वय किया था—

"मैंने उस आदित्यवर्ण अन्धकार के परे वाले पुरुष को जाना है, उसे जानकर मनुष्य मृत्यु से तर जाता है। जाने का कोई दूसरा मार्ग नहीं है।

(३—८)

"जिससे बड़ा या छोटा कोई और नहीं है, जिस से अधिक सूक्ष्म या स्थूल और कोई नहीं है। जो वृक्ष के समान आकाश में स्तब्ध अकेला खड़ा रहता है, उस पुरुष से सर्व पूर्ण है।" (३—९)

"उसे न ऊपर से, न नीचे से, न बीच से कोई समझ सकता है, न उसकी कोई प्रतिमा है, जिसका नाम महत यश है। उसका रूप नजर के भीतर नहीं आता। कोई उसे आँख से नहीं देख सकता। जो इसे हृदय और मन की सहायता से हृदय में स्थित जानते हैं वे अमर हो जाते हैं।" (४—१९, २०)

"वही एक इस भुवन, विश्व के मध्य में आता जाता है। वही अग्नि है, वही जल में भी प्रविष्ट है उसी को जानकर मनुष्य मृत्यु को पार कर सकता है। दूसरा कोई मार्ग जाने को है ही नहीं।" (४-२१)

× × ×

बौद्धधर्म एक प्रकारसे निरीश्वरवादी है और इस लिये इसके सामान्य स्वरूप में हिन्दू धर्म का सा स्पष्ट सर्वेश्वरवाद नहीं पाया जाता। तो भी भगवान बुद्ध ने वस्तुमात्र का एक ही आधार माना है। इन्होंने इसे निर्वाण का नाम देकर इस प्रकार वर्णन किया है—

"भिक्षुओ! एक ऐसा स्थान है जहाँ न पृथ्वी है, न जल है, न वायु है, न वहाँ अवकाश का अनन्त जगत है। न वहां बुद्धि का अनन्त जगत है। न वहां किसी प्रकार की अवस्तु का ही जगत है। न वह प्रत्यक्ष ज्ञान या संज्ञा का लोक है, न वहां असंज्ञा ही है, न वहाँ यह लोक है, न वहाँ दूसरा ही लोक है, न वहाँ सूर्य है न वहाँ चंद्रमा है। हे भिक्षुओ! उसे मैं न आना कहता हूँ, न जाना, न खड़े रहना, न जन्म, न मृत्यु। वह बिना आधार का, बिना अन्त का, विचार से परे है। वह सत्य ही दुःख का नाश रूप है। हे भिक्षुओ! वह अजन्मा, अव्यक्त, असृष्ट और अमर्यादित है। यदि वह अजन्मा, अव्यक्त न होता तो इस जगत में जो जन्म लेता है, व्यक्त होता है, सजा जाता है या मर्यादित होता है, उसका हम को भान भी नहीं होता।"

× × ×

ईसाई धर्म में सर्वेश्वरवाद को सिद्धान्त रूप से नहीं मानते। इसका यह कारण भी है कि जिन धर्मों में प्रभु के सर्वातीत रूप पर जोर दिया जाता है उनमें उनके सर्व व्यापक रूप को ग्रहण करने में विरोध भाव उत्पन्न होता है। फिर भी ईसाई धर्म में बहुत से भावनायोगी सर्वेश्वरवादी हो गये हैं। प्रभु 'ईसा के महावाक्य' नामक पुस्तक में उनका

एक उद्गार इस प्रकार है:—

"पत्थर को उठाओ और वहाँ भी तू मुझे पावेगा। लकड़ी को फाड़ो और वहां भी मैं मौजूद हूँ।" आगे चल कर एक स्थान पर फिर कहा है—

"तुम पूछते हो कि वे कौन है जो 'राज्य' के निकट हमको पहुंचाते हैं, यदि वह राज्य स्वर्ग में है तो?... वायु मंडल के सब पक्षी और सारे पशु जो पृथ्वी पर या पृथ्वी के भीतर रहते हैं और समुद्र की मछलियाँ ये सब हमें पहुंचाते हैं। और स्वर्ग का राज्य तुम्हारे भीतर ही है। जो कोई अपने को पहचानेगा वह उसे पावेगा।"

× × ×

सर्वेश्वरवाद का एक मनोहर रूप वह है जो सूफी धर्म में पाया जाता है। ईरान का भावना योगी कवि नामी कहता है—

"प्रकृति के प्रत्येक परमाणु को ईश्वर ने ऐसा दर्पण बनाया है जिससे उसके मुख की सुन्दरता झलकती है। गुलाब के फूल से उसकी सुन्दरता प्रकट होती है और बुलबुल पक्षी उस सुन्दरता को देख कर प्रेम से पागल बन जाता है। उसी अग्नि से दीपक की ज्योति में वह प्रकाश आया जो पतंग या परवाने को मोह में डालकर जला देता है। सूर्य पर जब उसका सौंदर्य चमका तो तुरंत ही पानी की लहर में कमल की कली निकल पड़ी।......सावधान। ऐसा मत कहो कि वह परम सौन्दर्य है और हम उसके प्रेमी हैं। तुम तो केवल दर्पण मात्र हो और दर्पण के सामने वही खड़ा है जिसकी छाया दर्पण पर पड़ती है। वही अकेला व्यक्त है और तू तो वास्तव में ढँका है। वह दर्पण भी है। वह रत्नराशि और तिजोरी दोनों है। इसमें 'मैं' और 'तू' को स्थान नहीं है। ये तो केवल खाली मिथ्या छाया या आभास मात्र हैं।"

विज्ञान के आधुनिक काल में भी सर्वेश्वरवाद की गूँज इमर्सन आदि दार्शनिकों के लेखों में मिलती है—

"इस मन या विश्वात्मा में प्रत्येक मनुष्य का जीवन समाया हुआ है और वह जीवन दूसरे सब के साथ एकत्व का अनुभव करता है। वही एक सर्व सामान्य हृदय है।..... मनुष्य के भीतर जो पूर्ण विश्वात्मा स्थित है वही प्रज्ञा पूर्ण मौन रूप है, विश्व व्यापी सौन्दर्य रूप है। प्रत्येक अंश और प्रत्येक कण का उस पूर्ण से पूरा संबंध है। वही सनातन है। इसमें द्रष्टा, दृश्य, दर्शन और चश्मा, अथवा आत्मा अनात्मा सब एक ही है।"

इस विवेचन से हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि भारतीय उपनिषदों ने जिस अद्वैतवाद का प्रचार किया था उसका प्रभाव संसार के सभी धर्मों और देशों पर पड़ा। इससे मनुष्य को इस बात का ज्ञान हुआ कि इस विश्व में जो कुछ है सब ईश्वर है। सब प्रकार का जीवन, शक्ति और पदार्थ ईश्वर के अस्तित्व के विभिन्न रूप ही हैं। इस जगत को ईश्वर ने ही रचा है और ईश्वर उस सब में व्याप्त है, और इस जगत से परे भी स्थित है।

[यह अद्वैत ज्ञान केवल दर्शन शास्त्र की ही बातें नहीं हैं। भक्त कवियों ने और विशेषतः गोस्वामी तुलसीदासजी ने इसको सर्वसाधारण के समझने योग्य विषय भी बना दिया है और सर्वव्यापी राम की भक्ति द्वारा अद्वैत की प्राप्ति का मार्ग दिखला दिया है। यही गीता के कर्म योग का तात्पर्य है। धर्म के सभी जिज्ञासुओं का कर्तव्य है कि धर्म के इस तत्त्व को समझें और तदनुकूल आचरण करें। यही सच्चा मुक्ति मार्ग है।]

दो हाथ और दो पैर होने से मनुष्य नहीं होता। मनुष्य वह होता है जो दूसरों के दुःख से दुःखी और सुख से सुखी होता है। घर में जब अभाव होता है तो सब हिस्से अनुसार बांटकर खाते हैं। सारा संसार एक परिवार है इसमें सबका हिस्सा है। मैं चाहता हूं कोई भूखा नंगा न रहे कोई दुःखी न रहे। यही ईश्वर भजन है।

— संत विनोबा भावे

* नित्य प्रति के व्यवहार में असत्य का प्रयोग *

(श्री० कृष्णदास जाजू)

इस लेख का शीर्षक कुछ विलक्षण है। 'सूक्ष्म असत्य' शब्द मुझे महात्मा गांधी जी से मिला है। मैं चाहता हूं कि यह शब्द चल पड़े। एक भाई दूसरों से अपने हाथ-पैर दबवाया करते थे, जो उचित नहीं था। पूछने पर उन्होंने बताया कि मेरी इच्छा न होते हुये भी मेरे हाथ पैर दबाये जाते हैं। महात्मा जी ने कहा कि "इन भाई के ध्यान में यह बात नहीं आई कि यह बात कहते हुये सूक्ष्म असत्य हो रहा है। अगर इच्छा न हो तो रोज-रोज हाथ पैर कैसे दबाये जा सकते हैं? दृढ़ता पूर्वक एक बार मना करने पर दबाना बन्द हो ही जाता।"

असत्य के पीछे 'सूक्ष्म' विशेषण लगने से यह ख्याल होना स्वाभाविक है कि असत्य सूक्ष्म और स्थूल दो प्रकार का हो सकता है। क्या सचमुच असत्य के ऐसे कुछ भेद हैं या वे किये जा सकते हैं? असत्य व्यवहार करने वाले की दृष्टि से तो कोई भेद नहीं दीखता, फिर भी ऐसे कुछ उदाहरण हो सकते हैं जब कि व्यक्ति को स्वयं पता नहीं चलता कि मैं असत्य कर रहा हूँ या नहीं। मनुष्य में अपूर्णता है, अज्ञान है, कई बातों में उसका ज्ञान अधूरा है, गलतफहमी भी रहती है, और वह सदा सावधानी पूर्वक सोचता भी नहीं। हर बात में सूक्ष्मता और स्थूलता रहती ही है। विशेष कर मन की प्रक्रियाएँ सूक्ष्म होती हैं। जहाँ तक हमारी दृष्टि स्थूल है, हम मोटे-मोटे दोष ही देख सकते हैं और उन्हें मिटाने का प्रयत्न कर सकते हैं। उतना हो जाने पर बाद में दीखता है कि अन्दर छिपे हुये कितने ही सूक्ष्म दोष पड़े हैं।

सूक्ष्म असत्य की व्याख्या करना बड़ा कठिन है। मोटे तौर पर हम कह सकते है कि, मैं जिसे सत्य समझता हूँ, हो सकता है कि वह असत्य ही [illegible] समझते हैं उसे मैं असत्य न समझता होऊँ। किसी बात को मैं तो जानता हूँ कि असत्य है, लेकिन दूसरे नहीं जान सकते या दूसरों से छिपाने की कोशिश करताहूं। कोई बात सचमुच असत्य है, पर उसे हम बहुत समय से करते आये हैं, दूसरे लोग भी करते हैं, अर्थात् व्यवहारिक दृष्टि से अब वह असत्य माना ही नहीं जाता, इसलिये उसमें कोई दोष नहीं दीखता। किसी की विशेष हानि नहीं है, ऐसा समझ कर भी असत्य कह दिया जाता है। जहाँ पैसे-टके का या व्यवहार का सम्बन्ध नहीं आता केवल दिलबहलाव के लिये किया जाता है, या बड़े-बड़े प्रतिष्ठित लोग भी वैसा करते हैं, इस असत्य को भी प्रतिष्ठा मिल जाती है। इस तरह सूक्ष्म असत्य अनेक प्रकार का हो सकता है जिसके कुछ उदाहरण हम यहां देते हैं।

(१) कई बार हम बिना कारण ही असत्य करते रहते हैं। जिसका शायद हमें भान ही नहीं होता या जिसमें हमें दोष नहीं दीख पड़ता। दूसरों की नजर में हम जैसे हैं उसकी अपेक्षा अधिक अच्छे दीखें, इस निमित्त से हमारी बोल चाल और अनेक काम ऐसे रहते हैं, जिनमें न्यूनाधिक असत्य और दिखावा रहता है। बहुत बार स्वभाव ही ऐसा बन जाता है कि हमारे व्यवहार में असलियत न रहकर कृत्रिमता आ जाती है। यह बात नहीं कि इसमें कोई विशेष हानि-लाभ है। फिर भी स्वाभाविकता और कृत्रिमता में जो फर्क है, वह तो है ही।

(२) खेल-कूद, हँसी-मजाक में असत्य को स्थान देने से दोष नहीं माना जाता। इसमें शायद इस बात का आधार मान लिया गया है कि किसी को नुकसान पहुँचाने का इरादा नहीं रहता है या कोई हानि-लाभ नहीं है। मोटे रूप में यह ठीक दीखता है. कानून की मर्यादा भी वहीं तक पहुँचती

है। परन्तु कानून तो बाह्य आचरण का ही नियंत्रण कर सकता है। हमें तो अन्तःकरण की शुद्धि तक पहुँचना है। क्या हँसी-मजाक, खेल कूद पूरी सचाई के साथ नहीं हो सकते? मन को पूरा आह्लाद देने लायक ऊँचे दर्जे का विनोद भी ठीक सचाई के साथ हो सकता है और वह हमारी सभ्यता और सुसंस्कृति की निशानी है।

(३) बच्चों के साथ तो हम बहुत कुछ असत्य व्यवहार करते रहते हैं। एक प्रकार से हम ही उनको असत्य सिखाते रहते हैं। कभी-कभी बच्चा किसी चीज या बात का आग्रह कर लेता है। अगर उसे वह चीज न देनी हो या उसकी चाही बात न करनी हो, तो हम साफ-साफ कह सकते हैं कि ऐसा नहीं होगा। थोड़े ही समय में उनका आग्रह शान्त हो जायगा। परन्तु अक्सर हम उसकी बात टालने के लिये, 'आगे कभी करेंगे' आदि कह कर कोई बहाना बता देते हैं। कुछ समय तक बालक हमारी बात पर भरोसा करता है, क्योंकि हम पर उसका पूरा विश्वास होता है। परन्तु धीरे-धीरे बालक जब देखता है कि उसको दिये हुये वचनों का पालन नहीं होता है, तो वह हमारी बात पर विश्वास करना छोड़ कर ज्यादा आग्रह करने लगता है। साथ-साथ वह यह भी सीख लेता है कि जब बुजुर्ग झूठी बात कह कर बहाना कर सकते हैं, तो मैं भी वैसा ही क्यों न करूं?

(४) बालक बड़ा होकर स्कूल कालेज में पढ़ने के लिये जाता है। ये संस्थाएँ सरस्वती के मन्दिर हैं, उनमें अशुद्ध व्यवहार के लिये स्थान नहीं होना चाहिये। फिर भी वहाँ गड़बड़ी चलती रहती है। परीक्षाएँ पास करने की दौड़ में कई लोग अनेक बेजा उपायों का अवलम्बन करते हैं। गैर हाजिरी के चाहे जैसे कारण बताये जा सकते हैं। गुरु-शिष्य का सम्बन्ध व्यवहारिक सा हो गया है, आध्यात्मिक तो शायद ही पाया जायगा। जहां छात्रों को प्रवेश देने की संख्या नियत होती है, वहाँ नाम लिखाने के लिये अनेक प्रकार के असत्य व्यवहार किये जाते हैं।

(५) आजकल प्रमाण-पत्र और सिफारिश- का महत्व बहुत बढ़ गया है। व्यवहार में बहुत अपरिचित लोगों से काम लेना पड़ता है। प्रमाण किसी विशेष हेतु से नहीं दिया जाय, वह के व्यक्ति के गुण-दोष का निदर्शक होता है। सिफा पत्र इस विशेष हेतु से दिया जाता है कि उम्मेद को उससे कुछ लाभ मिल सके। स्वयं सिफारि कुछ दोष है ही, क्योंकि जिस अधिकारी को नि करना पड़ता है उसके सामने अनेक उम्मीदवार हैं। गुण देखकर न्याय पूर्वक नौकरी देनी उ कर्तव्य है अगर सिफारिश से वह प्रभावित होत तो किसी न किसी दूसरे के प्रति अन्याय होता कुछ लोग तो खुद के परिचय के बिना ही मित्रों के कहने से या उम्मीदवार की याचन प्रमाण-पत्र या सिफारिश-पत्र दे देते हैं। वे स हैं कि केवल अपने शब्द मात्र से किसी का होता हो तो क्यों न होने दिया जाय? इससे व्यवहार में शिथिलता आती है।

(६) आलस के कारण भी सत्य का भङ्ग होता है। जो काम जिस समय करना चाहिये उस समय न करने से बाद में उसके बारे में र बदल जाते हैं। बदली हुई परिस्थिति में वह ठीक बैठती तो नहीं, पर बैठानी पड़ती है। कोई काम अधूरा रह जाय तो बाधा नहीं, चलकर पूरा कर लेंगे, इस आशा में हम असा रह जाते हैं। बाद में जब झूँठ कहे बिना बा नहीं पड़ सकती, तब बिना कारण और लाचा हम झूँठ कह देते हैं और यह समझ कर मान लेते हैं कि इसमें हम ने सचमुच कि ठगा नहीं है या किसी को हानि नहीं पहुँचाई असत्य करना पड़ा, वह तो नाम मात्र का है।

(७) अशुद्धि का सूक्ष्म व्यवहार का बड़ व्यवसायिक क्षेत्र है। इसमें भी हानि लाभ की को छोड़कर दूसरी अनेक बातें ऐसी हैं, जिसमें कारण या मोहवश असत्य किया जाता है अपनी होशियारी से चालाकी करते हैं परन्तु

पक्ष वाला भी हमारी चालाकी पहिचान सकता है। अपने माल की झूँठी तारीफ करना तो क्षम्य ही माना जाता है। कम-ज्यादा मोल-तोल बताना मामूली बात हो गई है। ग्राहक से भाव तय करने की झंझट में कितना समय बर्बाद होता है, इसका कोई हिसाब नहीं। दुकानदार और ग्राहक दोनों एक दूसरे को ठगने की कोशिश करते हैं। दोपहर के समय भी दुकान के सामने पर्दा डालकर और कृत्रिम-अन्धेरा बनाकर अन्दर बिजली की रोशनी इसलिये की जाती है कि चीजों का रूप रंग अधिक आकर्षक दिखाई दे। झूँठी विज्ञापन बाजी तो प्रसिद्ध ही है। अब उसे एक कला का रूप मिल गया है।

(८) धर्म के नाम पर भी असत्य कम नहीं चल रहा है। धर्म का धंधा करने वालों की तो बात ही छोड़ दें। उनमें दूसरे व्यावहारिक धंधे वालों से असत्य कम नहीं होता। दुःख की बात यह है कि यह सब ईश्वर के नाम पर किया जाता है और भोले लोग खुद विवेक न रखकर अपनी खुशी से ठगों के शिकार बनते हैं।

———

सुखी होने का राजमार्ग

(श्री० मेहेरबाबा, नासिक)

संसार में प्रत्येक प्राणी सुख खोज रहा है। वैसे तो मनुष्य अनेक बातों की अभिलाषा किया करता है, पर उन सब का उद्देश्य सुख की प्राप्ति ही होती है। यदि वह सत्ता या शक्ति प्राप्त करने के लिये उत्कंठित दिखाई देता है तो इसका कारण यही है कि वह सत्ता का उपयोग करके सुख प्राप्त करना चाहता है। यदि धन पैदा करना चाहता है तो इसी विचार से कि धन के द्वारा सुख मिल सकेगा। यदि वह विद्या, स्वास्थ्य, सौन्दर्य, विज्ञान, कला या साहित्य की साधना करता है तो इसका कारण यह है कि उसे यह जान पड़ता है कि इनके द्वारा सुख मिल सकेगा। यदि वह सांसारिक सफलता अथवा यश के लिये प्रयत्न करता है तो इसी लिये कि वह समझता है कि इनके द्वारा सुख उपलब्ध हो सकता है। सारांश यह है कि मनुष्य जितने भी उद्यम और उद्योग करता है उनका अन्तिम लक्ष्य सुख की प्राप्ति ही होता है।

प्रत्येक व्यक्ति सुखी होना चाहता है किन्तु अधिकांश व्यक्ति किसी न किसी प्रकार के दुःख से पीड़ित हैं। यदि उन्हें कभी सुख प्राप्त होता है तो उसमें दुःख भी मिला रहता है। मनुष्य को केवल सुख, अमिश्रित सुख, कभी नहीं मिलता। वह सुख और दुख के द्वन्द के बीच झूलता रहता है। मानव जीवन जैसा आज कल हो रहा है उसमें सुख के क्षण बहुत कम आते हैं, और वे भी इन्द्र धनुष के मनोहर रंगों की तरह शीघ्र ही लुप्त हो जाते हैं। यदि ये सुख के क्षण अपना कोई चिन्ह छोड़ जाते हैं तो वह उनकी स्मृति होती है, जो उल्टा हमारे दुख की वृद्धि करती है।

मनुष्य दुःख नहीं खोजता, किन्तु जिस रीति से वह सुख खोजता है उससे उसे अनिवार्य रूप से दुःख भी मिलता है। वह अपनी इच्छाओं की तृप्ति द्वारा सुख प्राप्त करना चाहता है किन्तु इच्छाओं की तृप्ति कोई निश्चय वस्तु नहीं होती। अतः इच्छाओं की पूर्ति का प्रयत्न करने के साथ साथ मनुष्य को उनकी अतृप्ति के लिये भी तैयार होना पड़ता है। इच्छा रूपी वृक्ष में दो प्रकार के फल लगते हैं। एक प्रकार का फल मीठा होता है जो सुख रूप है और दूसरा फल कड़वा होता है जो दुख रूप है। जो एक प्रकार का फल लेना चाहता है उसे दूसरे प्रकार के फल के लिये भी तैयार होना पड़ता है। मनुष्य अधीरता पूर्वक सुख खोजता है और जब

वह उसे प्राप्त हो जाता है तो वह शौक से उसके साथ संलग्न हो जाता है और आगामी दुख को टालने की कोशिश करता है। पर सुख के बाद दुख अनिवार्य रूप से आता ही है और तब उसे बड़ी तीक्ष्ण वेदना सहन करनी पड़ती है।

अनेक प्रकार की इच्छाओं के आवेग से मनुष्य संसार में सुख की खोज करता है। परन्तु कुछ समय बाद उसका सुख सम्बन्धी उत्साह बदल जाता है। क्योंकि जब वह सुख से भरे पात्र की तरफ हाथ बढ़ाता है उस समय भी स्वभावतः उसे दुःख की घूँटें पीनी पड़ती हैं। सुखों के साथ भीतर जाने वाले दुखों से उसका उत्साह फीका पड़ जाता है। वह प्रायः अकस्मात आने वाली मानसिक प्रवृत्तियों का शिकार होता रहता है। एक समय वह अपने को सुखी और गर्वित अनुभव करता है, दूसरे समय वह अत्यन्त दुःखी और अपमानित जान पड़ने लगता है। इच्छाओं के पूर्ण होने या खंडित होने के अनुसार उसके मन की स्थिति भी बदलती रहती है। किन्हीं किन्हीं इच्छाओं की पूर्ति से उसे क्षणिक सुख प्राप्त होता है पर उस सुख के पश्चात ही उदासी की प्रतिक्रिया होने लगती है। इस प्रकार उसके मन की स्थिति में चढ़ाव उतार होते रहते हैं और वह निरंतर विषमता का शिकार बनता है।

इच्छाओं की पूर्ति से इच्छाओं का अन्त नहीं होता। इच्छाओं की पूर्ति होने से वे थोड़ी देर के लिये विलीन हो जाती हैं, पर कुछ ही समय बाद और भी प्रचण्ड वेग से प्रकट होने लगती हैं। मनुष्य को जब भूख लगती है तो वह इच्छा को संतुष्ट करने के लिये खाता है, किन्तु थोड़ी ही देर बाद वह फिर भूखा हो जाता है। अगर स्वाद या लालच-वश वह अधिक खा लेता है तो अपनी इच्छा के फलस्वरूप उसे अजीर्ण, उदरशूल आदि के रूपमें और भी दुःख सहन करना पड़ता है। यह बात संसार की सभी इच्छाओं पर लागू होती है। इससे इन इच्छाओं की पूर्ति से प्राप्त होने वाला सुख कम होने लगता है और अन्त में बिलकुल समाप्त ही हो जाता है।

इच्छा से उत्पन्न दुःख का जब मनुष्य अनुभव करता है अथवा पहले से ही उस दुःख का अनुमान कर लेता है तो उसकी इच्छा का दमन होता है। कभी-कभी तीव्र दुःख उसे संसार से विरक्त और अनासक्त बना देता है। किन्तु इच्छाओं की बाढ़ सांसारिक वस्तुओं के प्रति उसकी इस अनासक्ति को प्रायः फिर से तोड़कर बहा देती है। ऐसी ही अस्थायी अनासक्ति को "श्मशान वैराग्य" के नाम से पुकारा जाता है।

कभी-कभी मन की यह अनासक्ति की स्थिति अधिक स्थायी होती है और काफी समय तक ठहरती है। अपने प्रियजनों की मृत्यु, या धन नाश, या यश नाश जैसी बड़ी विपत्तियों के आ जाने से प्रायः इस प्रकार का तीव्र वैराग्य उत्पन्न होता है। उस समय अनासक्ति की लहर के प्रभाव से संसार की सभी वस्तुओं की तरफ से रुचि हटा लेता है। इस प्रकार के तीव्र वैराग्य का एक विशेष आध्यात्मिक महत्त्व होता है। किन्तु कुछ समय पश्चात यह वैराग्य भी लुप्त हो जाता है, क्योंकि वह ज्ञान से उत्पन्न नहीं होता वरन् सांसारिक जीवन में प्राप्त होने वाली आपत्तियों से एक प्रतिक्रिया के रूप में उसकी उत्पत्ति होती है।

वैराग्य अथवा अनासक्ति की भावना उसी दशा में स्थायी और सच्ची होती है जब वह दुःख के स्वरूप तथा कारणों का ज्ञान होने से उत्पन्न होती है। अनासक्ति की इस भावना का आधार इस बात का ज्ञान होता है कि संसार की सारी वस्तुएँ क्षणिक तथा नाशवान हैं, इसलिये उनमें आसक्ति रखने से अन्तमें दुःख भोगना पड़ेगा। इसलिए वास्तविक सुख तभी प्राप्त हो सकता है जब कि मनुष्य के हृदय में वैराग्य अथवा अनासक्ति का भाव दृढ़ रूप से जम जाता है। ऐसा मनुष्य न तो सुख से चंचल होता है और न दुःख से विचलित होता है। जो व्यक्ति प्रिय वस्तुओं से प्रभावित होगा और सुख मानेगा उसका अप्रिय वस्तुओं से भी प्रभावित होना और दुःख मानना अनिवार्य है।

———

गीता और भावी वर्ण व्यवस्था

(श्री० हरिमोहन)

—:◆:◇:—

जिस समय गीता की रचना हुई उस समय भारतीय समाज चार वर्णों में विभक्त था। वर्ण-व्यवस्था के फलस्वरूप भिन्न-भिन्न जातियों के धर्म या काम जन्मसिद्ध माने जाते थे। समाज में ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य और शूद्र इन चार वर्णों के सिवाय और भी 'पाप योनि' जातियाँ थीं, कुत्ते खाने वाले श्वपाक (चण्डाल) भी थे। गीता के अनुसार इस जमाने में जिस जाति के हिस्से में जो काम आया उसी को करना ठीक माना गया था। यही नहीं गीता में यहाँ तक कह दिया गया है कि अपना कर्म छोड़ कर दूसरे का धर्म स्वीकार करना बड़े भय की बात है। इससे समाज व्यवस्था को हानि पहुंचने की आशंका है।

विचारणीय विषय यह है कि गीता के समय में समाज की व्यवस्था कैसी भी रही हो, पर क्या उसका आशय यह है कि देश और काल में चाहे जैसा परिवर्तन हो जाय, वह प्राचीन व्यवस्था सदा अटल रहेगी। स्वयं गीता ने ऐसी बात की कोई गारंटी नहीं दी है। गीता ने उपरोक्त व्यवस्था उस समय के लिए दी थी जबकि चारों वर्णों के व्यक्ति अपने धर्म का वास्तविक रूप में पालन करते थे। इतना ही नहीं उस समय जो वर्ण जितना ऊंचा और सम्मान का पात्र माना जाता था, उसका उत्तर-दायित्व भी उतना ही अधिक था। ब्राह्मण अगर अधिक आदर के पात्र माने जाते थे तो इन्द्रिय सुख को भोगने का अधिकार भी उनको सबसे कम था। बाहर और भीतर की इन्द्रियों को संयम में रखना उनका कर्तव्य माना गया था गीता के समय के समाज का जितना वर्णन हमको मिलता है उसमें एक भी ब्राह्मण ऐसा नहीं मिलता जिसने दौलत इकट्ठी की हो या जो ऐश आराम की जिन्दगी बिताता हो। क्षत्रिय जाति यद्यपि राजपद की अधिकारी थी पर उसको सदा अपनी जान हथेली पर लेकर रहना पड़ता था। उस समय हार जाने की बदनामी मरने से भी बुरी समझी जाती थी। इस लिये कोई क्षत्री रणभूमि में पीठ नहीं दिखा सकता था। यही कारण है कि गीता में ब्राह्मणों के लिये जहाँ दस कर्तव्य और क्षत्रियों के लिये सात कर्तव्य बतलाये हैं वहाँ वैश्यों के लिये तीन कर्तव्य और शूद्रों के लिये केवल एक ही कर्तव्य का बंधन बत-लाया गया है। बंधन और सम्मान में कमी और बेशी इस प्रकार रखी जाती थी कि समाज व्यवस्था में किसी व्यक्ति का पलड़ा भारी नहीं होने पाता था। इसी लिये गीता के 'विभूति योग' अध्याय में प्रत्येक जादि की मुख्य बातों को बतलाते हुये भगवान ने कहीं पर भी यह नहीं कहा कि 'वर्णानां ब्राह्मणो ऽस्म्यहम' अर्थात् "चारों वर्ण वालों में से मैं ब्राह्मण हूँ।"

आज उच्च जाति के कहलाने वाले लोग केवल सम्मान चाहते हैं, और उत्तरदायित्व अथवा बंधन से दूर हटते हैं। पर ऐसा किस प्रकार संभव हो सकता है? आज ब्राह्मणों ने अपनी विद्या का, क्षत्रियों ने अपने बल का और वैश्यों ने अपने धन का उपयोग समाज हित के लिये करना छोड़ दिया है। आज सबसे बड़ी आवश्यकता यही है कि वास्त-विक रूप से छोटे लोगों को भी समान अधिकार दें। जब तक हम न्याय और समता के सिद्धान्त पर चलने नहीं लगेंगे तब तक उत्तम सामाजिक व्यवस्था की स्थापना हो सकना संभव नहीं।

जब हम वर्तमान समय की अस्वाभाविक असमानता से छुटकारा पाकर प्रकृति के अनुकूल समानता के स्तर पर आ जायेंगे, तब किसी भी व्यक्ति के लिये कर्म का निश्चय केवल इसी बात के आधार पर किया जायगा कि उसकी स्वाभाविक

प्रवृत्ति किस ओर है। ऐसा निर्णय प्रथम तो प्रत्येक व्यक्ति अपने लिये स्वयं ही कर सकता है, यदि उसे कठिनाई हो तो अनुभवी गुरुजनों से भी सम्मति मिल सकती है। समाज में समानता की भावना पैदा हो जाने के कारण लोगों के मन में यह धारणा तो रहेगी नहीं कि कौनसा काम श्रेष्ठ है और कौन सा काम घटिया है। इसी प्रकार सबको जीवन निर्वाह तथा सुख पाने की एक-सी सुविधायें होने से यह भी विचार मन में न आयेगा कि इस काम में ज्यादा आमदनी होगी और इसमें कम होगी; इस समय केवल एक यही बात विचारणीय रहेगी कि हम कौन-सा काम अच्छी तरह से और योग्यता पूर्वक कर सकेंगे। जब हम इस प्रकार अपनी रुचि और प्रकृति के अनुसार काम करने का मौका पायेंगे तो उसमें असफल या फिसड्डी रह जाने का डर भी नहीं रहेगा।

वर्तमान सामाजिक व्यवस्था में संशोधन करके नई व्यवस्था का निर्माण करने से पहले प्रत्येक कार्य को प्रतिष्ठा और आर्थिक समता की स्थिति का लाना अनिवार्य है। यह कार्य कठिन अवश्य है, पर जैसा गीताकार ने कहा है 'काम एष, क्रोध एष रजोगुण समुद्भवः' के सिद्धान्त को ध्यान में रखकर हम इंद्रियों का संयम करके विषमता की भावना को नष्ट कर सकते हैं। जब कि हमारे पूर्वज हमको स्पष्ट शब्दों में 'आत्मवद् सर्व भूतेषु' और 'आत्मौपम्ये सर्वत्र समं पश्यति' का उपदेश दे गये हैं और स्वयं उस पर चल कर हमको मार्ग दिखला गये हैं, तो कोई कारण नहीं कि हम उसके अनुसार आचरण न कर सकें। अर्जुन के समान चंचल मन के कारण हमको भी इस साम्य योग पर चलने में आरम्भ में कठिनाई जान पड़ेगी, पर अभ्यास, वैराग्य और संयम से इसे सिद्ध करना ही होगा।

※ वेद ही भारतीय संस्कृति का मूल है ※

(श्री॰ 'शङ्कर')

भारतीय संस्कृति के इतिहास में वेदों का स्थान बहुत गौरव का है। श्रुति (वेद) की दृढ़ नींव के ऊपर ही भारतीय धर्म तथा सभ्यता का भव्य भवन टिका है। हिन्दुओं के आचार-विचार, रहन-सहन, धर्म-कर्म को भली भांति समझने के लिये वेदों का ज्ञान विशेष आवश्यक है। हमारे महाज्ञानी ऋषियों द्वारा [illegible] तत्वों की विशाल राशि का नाम ही वेद है। स्मृति तथा पुराणों में वेद की बड़ी प्रशंसा की गई है। मनु के कथनानुसार जिस प्रकार संसार की वस्तुओं को देखने के लिये आँखों की जरूरत है उसी प्रकार पारलौकिक और आध्यात्मिक-तत्वों को जानने के लिये वेद की आवश्यकता है। वेद का विशेष महत्व इस बात से है कि वह बड़े-बड़े कठिन और गुह्य विषयों का रहस्य प्रकट कर देता है। उदाहरण के लिये 'ज्योतिष्टोम' यज्ञ के करने से स्वर्ग मिलता है इसलिये वह करने योग्य है और 'कलञ्ज' भक्षण से हानि होती है, इसलिये वह त्यागने योग्य है। इन विषयों का निर्णय कोई भी विद्वान अपनी विद्या या तर्क के द्वारा नहीं कर सकता। इस प्रकार के अनगिनती प्रश्नों का उत्तर हमको वेद द्वारा ही ज्ञात हो सकता है।

वेद की भारतीय धर्म में इतनी प्रतिष्ठा है कि—कोई विद्वान तर्क द्वारा किसी भी विषय को सिद्ध कर दे, पर वह यदि वह वेद विरुद्ध जान पड़ेगा तो उनको उसके सामने सर झुकाना पड़ेगा। हमारे अधिकांश भाई ईश्वर का विरोध सहन कर सकते हैं, पर वेद का विरोध सहन नहीं कर सकते। जो दर्शनशास्त्र ईश्वर को नहीं मानते उनको 'आस्तिकता' से विहीन नहीं कहा जाता, पर जो वेद की प्रामाणिकता को अस्वीकार करते हैं उनको निश्चित रूप से 'नास्तिक'

की पदवी दे दी जाती है। इस प्रकार वेदों का महत्व हिन्दू धर्म में सब से अधिक है। 'शतपथ ब्राह्मण' में स्पष्ट लिखा है कि धन से भरी हुई पृथ्वी के दान से जितना पुण्य होता है, तीन वेदों के अध्ययन करने से उससे अधिक पुण्य मिलता है।

मनु भगवान ने वेद के जानने वाले विद्वान की प्रशंसा करते हुये कहा है कि "वेद शास्त्र के तत्व को जानने वाला व्यक्ति किसी भी आश्रम में रहे, वह इसीलोक में रहते हुये ब्रह्मका साक्षातकार करता है।"

इस विवेचन से ज्ञात होता है कि यदि हम भारतीय धर्म के वास्तविक स्वरूप का ज्ञान प्राप्त करना चाहते हैं, तो हम को वेदों का अनुशीलन करना आवश्यक है। मनु ने वेद का अध्ययन न करने वाले ब्राह्मण की बड़ी निन्दा की है और कहा है कि जो ब्राह्मण वेद का अध्ययन किये बिना अन्य शास्त्रों को पढ़ने में परिश्रम करता है वह अपने वंश सहित शूद्र के दर्जे को पहुंच जाता है। द्विजका द्विजत्व तभी सार्थक हो सकता है जब वह गुरु से दीक्षा ले कर वेदों का अध्ययन करे।

इसलिए हम कह सकते हैं कि वेद का अनुशीलन प्रत्येक हिन्दू का कर्तव्य है, क्योंकि इसके बिना वे अपने धर्म और संस्कृति के असली तत्वों की जानकारी प्राप्त नहीं कर सकते। परन्तु आज कल लोगों ने इसकी पूरी तरह से उपेक्षा कर रखी है। अपना पेट पालने के लिये हमारा शिक्षाकाल तो अधिकांश में विदेशी भाषा और साहित्य का अध्ययन करने में ही निकल जाता है। जो संस्कृत पढ़ते हैं वे भी काव्य, नाटक आदि के द्वारा आनन्द प्राप्त करने में संलग्न रहते हैं, वेदों की तरफ कोई आँख उठा कर भी नहीं देखता।

क्या यह खेद का विषय नहीं है कि हम काव्य, नाटक आदि के अध्ययन को तो महत्व दें, और समस्त भारतीय साहित्य के मूल स्वरूप वेदों की तरफ से उदासीन रहें। साधारण संस्कृत जानने वाले लोगों की बात तो छोड़ दीजिये अष्टाध्यायी के जानकार पंडित भी सिवाय सूत्रों को रटने और उन पर वादविवाद करने के वेदों के पढ़ने की तरफ रुचि नहीं रखते। जिन विद्वान ब्राह्मणों के ऊपर समाज को मार्ग दिखलाने का उत्तरदायित्व है वे ही संसार के ग्रन्थों में शिरोमणि माने जाने वाले इन ग्रन्थरत्नों वेदों से अनभिज्ञ रहें यह कितनी लज्जा की बात है। काशी, पूना, जैसे केन्द्रों में आज भी अनेक वैदिक पण्डित ऐसे मौजूद हैं जिन्होंने ऐसे विपरीत समय में भी घोर परिश्रम करके समस्त वेद मन्त्रों को कंठस्थ किया है और वे उनका उच्चारण ठीक उसी भांति कर सकते हैं जैसा कि वैदिक युग के ऋषि किया करते थे। इन लोगों की वेदभक्ति और सच्ची लगन की जितनी प्रशंसा की जाय कम है। पर उन में एक बड़ी त्रुटि यह होती है कि वे वेदमन्त्रों के अक्षर तो जानते हैं पर अर्थ को नहीं जानते, इस लिये उनका महत्व कम हो जाता है।

भाषा-विज्ञान की दृष्टि से भी वेदों का अध्ययन बड़े महत्व का है और यही कारण है कि विदेशों के बड़े-बड़े विश्व विद्यालयों में वेदों की भाषा का अध्ययन किया जाता है। यह सिद्ध हो चुका है कि संसार की सभी प्रमुख भाषाओं का आदि स्रोत वैदिक भाषा ही है। वैदिक संस्कृत के शब्दों से फारसी, अरबी और उनसे ग्रीक, लैटिन, अङ्गरेजी आदि के शब्दों की समानता के बहुत से उदाहरण विद्वानों ने दिये हैं, जैसे—पितृ, पिदर, फादर, मातृ—मादर-मदर दुहिता, दुख्तर, डॉटर। इस प्रकार के सैकड़ों शब्द पाये जाते हैं जिनका मूल वैदिक भाषा में ही मिलता है। इस दृष्टि से दुनिया भर के भाषा-शास्त्र के जानकार वेदों को बड़े सम्मान की निगाह से देखते हैं। वैदिक भाषा और व्याकरण का विशेषज्ञ अन्य भाषाओं का ज्ञान अपेक्षाकृत बहुत शीघ्र प्राप्त कर सकता है क्योंकि वह उनकी बनावट के मूलतत्व को जानता है।

ऐसे विपरीत समय में वेदों के अर्थ को जान कर जो लोग उनमें बतलाये गये धर्म, आचार, व्यवहार तथा अध्यात्म के सिद्धान्तों को समझने तथा अन्य जिज्ञासुओं में उसका प्रचार करने का उद्योग करते हैं वे अवश्य ही श्रद्धा के पात्र हैं।

जीवन को सुखी बनाने का सहज मार्ग—अपरिग्रह

(श्री० आर० के० शर्मा)

—++++—

संसार में मनुष्य का मुख्य उद्देश्य सुख की प्राप्ति माना गया है। सब कोई इसी के लिये प्रयत्न करते रहते हैं और तरह-तरह की सामग्रियां एकत्रित करते रहते हैं। अधिकांश मनुष्यों का इस विषय में यही विचार देखनेमें आता है कि हमारे पास जितनी अधिक सामग्री, जीवन निर्वाह के साधन, धन, सम्पत्ति आदि होगी उतने ही हम सुखी हो सकेंगे। पर हम प्रायः यह देखते हैं कि जिसके पास जितना अधिक माल असबाब होता है वह उतना ही अशांत और दुनियाँ की हाय हाय से व्याकुल होता है।

कारण यह है कि हम जितनी सामग्री और सम्पत्ति एकत्रित करते हैं वह सब हमारे लिए वास्तव में आवश्यक नहीं होती। दूसरों को देख कर या लालसा के कारण हम झूठमूठ अपनी आवश्यकताओं को बढ़ा लेते हैं और उनकी पूर्ति के लिए दिन रात दौड़ धूप करके उन्हीं की चिन्ता में अपनी आयु समाप्त कर देते हैं। ऐसे लोग प्रकट में चाहे सुखी भी दिखलाई पड़ें, पर दूसरों के पास अपने से भी ज्यादा सम्पत्ति और सामग्री देखकर, और अपने पास की सम्पत्ति की रक्षा के लिए उनको बड़ी परेशानी उठानी पड़ती है। वे प्रायः यही सोचा करते हैं कि "अमुक वस्तु अथवा पदार्थ तो हमें अवश्य ही चाहिए। इस चीज के बिना तो हमारा कार्य चल ही नहीं सकता। ऐसी चीज न मिल सकी तो व्यवहार में बाधा आजायगी" पहिनने के लिये चार कपड़े की आवश्यकता है तो वे सौ पचास संग्रह करके रखना चाहते हैं। रहने के लिये एक मकान मौजूद है, पर मनमें दो चार और बड़े मकान, कोठियाँ बनाने की लालसा लगी रहती है।

यह सच है कि जीवन के समुचित निर्वाह के लिये मनुष्य को कितने ही पदार्थों की अनिवार्य रूप से आवश्यकता होती है। पर इसमें भी संदेह नहीं कि कितनी ही बातें ऐसी भी हैं जिनक आवश्यकता हमने जान बूझ कर पैदा कर ली और उनके बिना भी जीवन निर्वाह सुख पूर्वक हं सकता है। इस प्रकार की चीजों का शौक लग जाने से मनुष्य संसार की बाहरी बातों से अधि प्रेम करने लगता है और उनके मोह जाल में फँ जाता है।

पर इसका तात्पर्य यह नहीं है कि मनुष्य किस वस्तु की प्राप्ति के लिये उद्योग न करे और कैसी भ भली बुरी हालत में दिन बिता कर जिन्दगी पू करले। या वह किसी सुन्दर वस्तु की इच्छा न क या किसी उच्च स्थिति तक पहुंचने के लिये उद्यो न करे। यह तो निकम्मे लोगों का सिद्धान्त है ज कहा करते हैं कि— "अजगर करें न चाकरी पंछ करें न काम।" हम किसी को ऐसा उद्योगहीं अथवा अभिलाषा शून्य जीवन व्यतीत करने क सलाह नहीं देते। हमारा कहने का आशय इतना ह है कि वस्तुओं का संग्रह आवश्यकतानुसार किय जाय न कि लालच के रूप में, और साथ ही यह भ दृष्टिगोचर रखा जाय कि केवल संसार के भौति पदार्थ ही आपको आनन्द नहीं दे सकते वर वास्तविक आनन्द अपने भीतर से ही प्राप्त हो सक है। अतः केवल सांसारिक वस्तुओं को सुखी हो का साधन मत समझ बैठो।

दुनियां में आप हजारों ऐसे राजा महाराज सेठ, साहूकार देख सकते हैं जिनके पास बड़े-ब खजाने, जमीन, जायदाद, सुन्दर से सुन्दर मह सुख की सभी सामग्रियाँ हैं। जिनको मोटर का वायुयान स्पेशल ट्रेनें आदि आवागमन के सा साधन प्राप्त हैं। धन जन ऐश्वर्य सब कुछ है औ जिस किसी पदार्थ की इच्छा हो उसे तुरंत प्राप्त क सकते हैं, फिर भी वे दुःखी असन्तुष्ट नजर आते

और समय समय पर अपने दुःख का रोना रोया करते हैं। इन्हीं के मुकाबले में अनेक लोग ऐसे भी मौजूद हैं जिनको रहने को घर नहीं, सोने का स्थान नहीं, भोजन का कोई ठिकाना नहीं, धन नहीं, जन नहीं और पग पग पर आपत्तियों का सामना करना पड़ता है। जगत में उन्हें कोई सुख नहीं मिला। फिर भी वे हमेशा बहुत प्रसन्न, हर्षित और मस्त रहते हैं। उनके चेहरे पर किसी बात की चिंता दुःख या ग्लानि का चिन्ह दिखलाई नहीं पड़ता। इसका कारण यही होता है कि वे संसार के पदार्थों से ज्यादा मोह नहीं रखते और न अपनी आवश्यकताओं को जान बूझ कर बढ़ाते हैं इससे वे अनेक तरह की परेशानियों से बचे रहते हैं और किसी वस्तु का अभाव होने पर उनको रोना नहीं पड़ता।

इस लिये अगर आप वास्तव में सुखी होना चाहते हैं तो आज से ही इस विचार को त्याग दें कि अमुक वस्तु की प्राप्ति से ही हमको आनन्द प्राप्त होगा अथवा अमुक वस्तु न मिल सकी तो हमको खेद या दुःख होगा। अमुक वस्तु के न मिलने से चित्त को अशांति होगी अथवा उनको तृप्ति न होगी। इस प्रकार की धारणाओं में फँस कर मनुष्य अपने जीवन को परतंत्र और दुःखी बना लेते हैं। अगर जीवन को सुखपूर्वक व्यतीत करना चाहते हो तो उपरोक्त सिद्धान्त को हृदयङ्गम करके अपनी आवश्यकताओं को कम करो।

तुम जितना अधिक आवश्यकताओं के पीछे दौड़ते हो उतना ही तुमको दुःख और क्लेश मिलता है। क्योंकि ये पदार्थ परिवर्तनशील हैं और इस लिये हमारी आवश्यकतायें भी पूर्ण होने के बजाय बढ़ती चली जाती हैं। इस लिये सुखी होना चाहते हो तो सुख के वास्तविक स्वरूप की खोज करो और झूठी आवश्यकताओं को कभी महत्व मत दो। योरोप के एक प्रसिद्ध दार्शनिक "कौवेट" ने सत्य कहा है:—

"मानव अपने साधनों की महानता से नहीं वरन् अपनी इच्छाओं या कामनाओं की लघुता से ही स्वतन्त्रता प्राप्त करता है।"

प्रार्थना द्वारा अपनी अभीष्ट सिद्ध कीजिये

(एक भक्त)

परम पिता परमात्मा की प्रार्थना इस संसार रूपी समुद्र में मनुष्य का सबसे बड़ा आश्रय है। इसके द्वारा हमारे मन में एक महान शक्ति का प्रादुर्भाव होता है और उसके द्वारा हम बड़े बड़े कठिन जान पड़ने वाले कामों को सहज में पूरा कर डालते हैं।

ईश प्रार्थना की प्रणाली केवल हिन्दू धर्म अथवा भारतवर्ष की ही वस्तु नहीं है, वरन् सभी धर्मों और देशों के महापुरुषों ने इसका विधान किया है और इसे कष्टों तथा आपत्तियों से बचने का सर्वप्रधान साधन माना है। ईसाइयों में प्रार्थना का बड़ा महत्व है और कोई धार्मिक ईसाई प्रति दिन बिना प्रार्थना किये नहीं रहता। मुसलमानों की नमाज भी ईश प्रार्थना के सिवा और कुछ नहीं और उनके ऊँचे दर्जे के फकीर रात-रात भर जाग कर प्रार्थना करते रहते हैं। बौद्ध, जैन, पारसी, यहूदी सभी धर्मों में प्रार्थना का महत्व स्वीकार किया गया है। प्रार्थना किस प्रकार करनी अधिक उत्तम है और किस विधि से उसका प्रभाव शीघ्र ज्ञात हो सकता है इस सम्बन्ध में भगवत् भक्तों ने बहुत कुछ कहा है, उनमें से कुछ की चर्चा यहाँ की जाती है।

१— भगवान से हम जिस बात की या जिस वस्तु की प्रार्थना करते हैं उसकी तीव्र चाह हमारे मन में हो। यदि उस वस्तु के बिना हमारा काम अन्य किसी वस्तु से चल जाता दीखता हो तो समझना

मानेंगे कि उसकी तीव्र चाह हमारे मन में नहीं है।

२-प्रार्थना के समय पूर्ण धैर्य की आवश्यकता है। थोड़ी थोड़ी देर बाद यह ख्याल करते रहना कि अभी फल प्रकट हुआ कि नहीं, अविश्वास का परिचायक है। बीज बोकर जल से सींच कर फिर तुरंत ही उसे उखाड़ कर देखा नहीं जाता कि बीज में अङ्कुर निकलने लगा या नहीं।

३- प्रार्थना का तार टूटना नहीं चाहिये। फल प्रकट होने तक यथासाध्य अनवरत प्रार्थना चलती रहे।

४- यह पक्का विश्वास मन में बना रहे कि प्रभु यहीं हैं और वे अवश्य हमारी प्रार्थना को स्वीकार करके यह वस्तु हमको देंगे। जो कोई भी उनके सामने किसी वस्तु के लिये उपस्थित होता है उसे वे अवश्य उसकी माँगी वस्तु देते हैं। इसलिये हमें भी अवश्य देंगे।

५- किन्तु प्रार्थना के समय प्रभु के सामने उस वस्तु का रोना रोने की आवश्यकता नहीं है। प्रार्थना का रूप होना चाहिये, प्रभु से हृदय का मिलन, हृदय का एकीकरण, प्रभु के रूप में तन्मयता। सारांश यह है कि हम जो वस्तु चाहते हैं उसके अभाव की ओर से मन को हटाकर वह वस्तु जिन प्रभु में वर्तमान है, उनका ध्यान करें। बजाय इसके कि हम इस बात का ध्यान करें कि 'अमुक वस्तु नहीं है' 'अमुक वस्तु नहीं है' हम यह विचारते रहें कि हमारी चाही हुई वस्तु पूर्ण रूप में मौजूद है और वह हमको मिलेगी।

६- यह भी विचार करना चाहिये कि हम भी विश्व सृष्टा प्रभु के ही एक अंश हैं, तो वह वस्तु जिस प्रकार प्रभु में वर्तमान है उसी प्रकार हमारे अंदर भी मौजूद है। इस लिये हम भी चिन्तन के द्वारा अपने लिये उस वस्तु का निर्माण कर सकते हैं। यह नियम है कि हमारे प्रत्येक विचार मन में उत्पन्न होने पर पदार्थ भी वैसा ही रूप धारण करते हैं। इस लिये हम प्रार्थना के समय यदि वस्तु के अभाव का अपनी दीनता का विचार करते रहेंगे तो इसका परिणाम आशाजनक नहीं हो सकता। इसके विपरीत प्रार्थना के समय हमको इस प्रकार के भाव रखने चाहिये— "हमें तो सब कुछ प्राप्त है, हमारा सब कुछ सुन्दर है, नाथ! तुम्हारी कृपा से मैं बराबर सफल होता जा रहा हूं।" ऐसे विचारों से हमारा प्रभु से संयोग होता जाता है और करुणा सागर भगवान की तरफ से जो कृपा की लहरें हमारी ओर आती रहती हैं उनसे प्रतिकूल परिस्थितयाँ मिटने लगती हैं और हम अपने अभीष्ट के निकट पहुँचने लग जाते हैं।

७- प्रार्थना के पूर्व हमें यह भी विचार कर लेना चाहिये कि जिस वस्तु को हम माँग रहे हैं वह किसी दूसरे व्यक्ति के हित की विरोधी तो नहीं है। मानलें कि यह इच्छा उत्पन्न हुई कि "हमारे अमुक शत्रु का विनाश हो जाय" और इस इच्छा की पूर्ति के लिये हम भगवान से प्रार्थना करने लगे तो इसकी पूर्ति के लिय भगवान का आश्रय मिल सकना असंभव है। प्रभु में किसी के प्रति शत्रुता अथवा द्वेष की कल्पना ही नहीं की जा सकती। उनकी दृष्टि में कोई भी पराया नहीं है, फिर वे द्वेष किससे करें? इस लिये किसी का अहित चाहने की प्रार्थना पर प्रभु कभी ध्यान नहीं दे सकते। अतः कभी हमारे मन में किसी के प्रति विरोध का भाव उत्पन्न भी हो तो उसको अन्य प्रकार से प्रकट करना चाहिये। उसको भगवान से प्रार्थना करनी चाहिये कि "हमारा यह विरोधी, जो हमसे शत्रुता रखता है, उसका हृदय विशुद्ध हो जाय और वह हमसे प्रेम करने लगे।" ऐसा करने से उस प्रार्थना का परिणाम शुभ हो सकता है।

८- [illegible] देनी चाहिये कि भगवान हमारी प्रार्थना से दब कर (जैसे खुशामद से सांसारिक अधिकारी प्रसन्न हो जाते हैं) हमारा उद्देश्य पूरा कर देंगे। प्रभु का मंगलमय विधान तो निश्चित है वह अनादिकाल से एक निश्चित क्रम से चल रहा है। वे इसमें हेर फेर नहीं करते। हाँ इतना अवश्य है कि जब वे हम पर कृपालु होते हैं तो हमारी मति को बदल कर सत्य और न्यायानुकूल मार्ग पर ला देते हैं।

(६) प्रार्थना से पूर्व कुछ देर तक अपनी इच्छित वस्तु का प्रसन्नता पूर्वक स्मरण करते रहें और अपनी हृदय की भाषा में भगवान से उस सम्बन्ध में प्रार्थना करें। किसी के द्वारा सिखाई गई भाषा में प्रायः कुछ कृत्रिमता आ ही जाती है, जिससे प्रभु के साथ संयोग होने में देर लगती है। इसलिये अपनी स्वाभाविक भाषा का प्रयोग करना ही उचित है।

(१०) हमें अपनी इच्छापूर्ति की अवधि, और उसके ढङ्ग के सम्बन्ध में कुछ न कहना चाहिये। हमारी इच्छित वस्तु कब मिलेगी और किस प्रकार मिलेगी इसे सर्वथा प्रभु की इच्छा पर ही छोड़ देना चाहिये।

(११) जहां तक अधिक से अधिक सम्भव हो, हम प्रार्थना करते रहें, पर यह बात प्रभु के अतिरिक्त और किसी पर प्रकट होनी उचित नहीं।

अगर हम इस विधि से प्रार्थना करेंगे तो हमको उसका परिणाम शीघ्र ही दिखलाई पड़ने लगेगा। इतना ही नहीं हमारे हृदय, मन, प्राण में प्रभु की दिव्य ज्योति भरने लगेगी। तब हम प्रार्थना के असली स्वरूप-भगवत प्रेम के निकट पहुँच जायेंगे। और सब विषयों से मन को हटाकर प्रभु की प्राप्ति के लिये ही प्रार्थना करने लगेंगे।

❋ चिर यौवन का स्रोत ❋

अमेरिका के भूतपूर्व सर्वोच्च सेनापति जनरल डगलस मैकार्थर की मेज के ठीक सामने सुन्दर फ्रेम में मढ़ा हुआ एक सुभाषित सदैव टंगा रहता है, जिसे पढ़कर किसके हृदय में साहस, विश्वास और स्फूर्ति का संचार नहीं होगा।

"यौवन जीवन का कोई नियत समय नहीं अपितु मन की स्थिति है; इच्छा का उद्वेग है, कल्पना की विशिष्टता है, अनुभूतियों का प्राबल्य है, भीरुता पर पराक्रम का प्रभुत्व है, आलस्य के प्रति प्रेम की अपेक्षा साहसिक कार्यों की भूख है।"

"अधिक वर्षों तक जीने से ही कोई वृद्ध नहीं हो जाता। लोगों पर-बुढ़ापा तभी आता है जब वे अपनी इच्छा-शक्ति का त्याग कर बैठते हैं। आयु शरीर पर झुरियाँ डाल देती है किन्तु उत्साहहीनता आत्मा पर झुरियाँ डालती है। चिन्ता, सन्देह, आत्म-संशय, भय और निराशा ही वे लम्बे-लम्बे वर्ष हैं जो सिर को झुकाकर विकासोन्मुख आत्मा को मिट्टी में मिला देते हैं"

"सत्तर का हो अथवा सत्रह का-प्रत्येक के हृदय में रहस्यों के प्रति आश्चर्य तथा नक्षत्रों और नक्षत्रों जैसी वस्तुओं के प्रति मधुर आकर्षण होता है। तभी वह घटनाओं की निर्भीक चुनौती को बच्चों की अतृप्त जिज्ञासा के समान उल्लास और जीवन की क्रीड़ा समझता है।"

"तुम उतने ही जवान हो जितना तुम्हें विश्वास है, और उतने ही बूढ़े हो जितना तुम्हें सन्देह है।"

"तुम उतने ही जवान हो जितनी तुम में आत्म-दृढ़ता है और उतने ही बूढ़े हो जितना तुम्हें भय है।"

"तुम उतने ही जवान हो जितनी तुम्हारी आशा है और उतने ही बूढ़े हो जितनी तुम्हारी निराशा है।"

"जब तक इस पृथ्वी पर तुम्हारा हृदय सौन्दर्य, उल्लास, साहस, वैभव और शक्ति का सन्देश मनुष्य और निस्सीम से प्राप्त करने में समर्थ है तब तक तुम जवान हो।"

"जब सारे तन्तु ढीले पड़ गये हों और तुम्हारे हृदय का केन्द्रस्थान नैराश्य के शीत और कटुता की बर्फ से ढक गया हो, तभी तुम्हें अपने को बूढ़ा समझना चाहिये और तब परमात्मा तुम पर अपनी कृपा करें।

मनुष्य मात्र की समानता

(श्री० विष्णु दत्त शर्मा)

—०::ॐ::०—

धर्म का अर्थ है–धारण करने वाला। जो उपदेश या जो विचार समाज को आचार और नीति पर चलने का मार्ग बतलाता है और उसे पतित होने से रोकता है वही धर्म है। देवी देवताओं की पूजा या विश्वास को ही हमारे प्राचीन दार्शनिकों ने धर्म नहीं कहा है। व्यास जी ने धर्म की जो व्याख्या की है वह अधिकांश बुद्धिमूलक और तर्क सम्मत है। महाभारत के अन्त में उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कह दिया है कि "धर्म ही अर्थ और काम की जड़ है, धर्म ही नित्य है, उसी का आश्रय लेना चाहिये।"

व्यास जी ने महाभारत में जगह-जगह इस बात पर विशेष बल दिया है कि मनुष्य किसी जाति या वर्ण में जन्म लेने से उच्च नीच नहीं बन जाता वरन् आचार और कर्म के आधार पर ही उसके सम्बन्ध में निर्णय करना चाहिये। 'वन पर्व' में नाग राज और युधिष्ठर का संवाद इस दृष्टि से बड़ा महत्वपूर्ण है। नाग ने पूछाः—

"हे राजन ! ब्राह्मण कौन है ?"

युधिष्ठर ने उत्तर दिया—'हे नागराज ! सत्य, दान, क्षमा, शील, सहृदयता, तप, दया जिसमें दिखाई पड़े वही ब्राह्मण है।

नाग ने फिर पूछा—"हे युधिष्ठिर ! लोक में चातुर्वर्ण्य का प्रमाण माना जाता है। यदि किसी शूद्र में आपके कहे हुए गुण पाये जायें तो क्या उसे ब्राह्मण माना जायगा ?"

युधिष्ठिर ने उत्तर दिया—"भाई, शूद्र में ऐसे लक्षण और सदाचार हों तो वह शूद्र नहीं रहा। ब्राह्मण में यदि ये लक्षण नहीं है तो उसे ब्राह्मण नहीं कहना चाहिये। ब्राह्मण वही है—जिसका चरित्र श्रेष्ठ है। जिनमें चरित्र का अभाव है वह तो शूद्र ही होते हैं।"

नाग इस विषय में और भी स्पष्ट और अपरिवर्तनीय उत्तर सुनना चाहता था। इसलिए उसने शङ्का की कि "यदि चरित्र से ही ब्राह्मण होता है तो फिर बिना कर्म या चरित्र के जाति-विभाग व्यर्थ ही समझना चाहिये।"

प्रश्न बहुत गम्भीर था और सामाजिक व्यवस्था की दृष्टि से उसका महत्व भी असाधारण था। तो भी युधिष्ठिर ने बिना किसी सङ्कोच के कहा—"हे नाग, यहाँ जात-पाँत है ही कहाँ ? ऐसी कोई जाति नहीं बतलाई जा सकती जिसमें वर्ण-शङ्करता का दोष न हो। वर्णों की आपसी मिलावट को देखते हुए मेरी राय में तो किसी जाति की ठीक पहिचान की बात उठाना ही व्यर्थ है। इस लिए तत्वदर्शी विद्वानों ने शील को ही मुख्य माना है। जन्म के बाद अपने-अपने वर्ण के अनुसार जाति-कर्म आदि संस्कार भी किये जायें, परन्तु अगर किसी में चरित्र नहीं है तो मैं तो उसे वर्ण शङ्कर की स्थिति में ही समझूँगा। इसी विचार से मैंने आरम्भ में ही यह कहा था कि जिसमें उत्तम चरित्र है वही ब्राह्मण समझा जाना चाहिए।"

भारत के सर्व प्रधान शास्त्राकार व्यास के ये शब्द भारतीय संस्कृति के वास्तविक स्वरूप पर प्रकाश डालने वाले हैं। यह कहा जा सकता है कि निजी स्वार्थ का प्रश्न सामने आने पर ब्राह्मण समुदाय के एक बड़े भाग ने इनको कार्य रूप में परिणित नहीं किया पर सिद्धांत रूप से किसी महापुरुष ने इनके खण्डन में मुँह नहीं खोला। भगवान शङ्कराचार्य जैसे आत्म तत्व की एकता के प्रचारक भी पहले

अपने जन्म स्थान (मलाबार प्रांत) के संस्कारों वश व्यवहार में छुआ छूत का विचार रखते थे। पर जब वे काशीपुरी में आये और यहाँ किसी मेहतर—महतरानी को देखकर स्वभावतः 'हटो-बचो' करने लगे तो काशी के ज्ञानाधिदेवता शिव इसे सहन न कर सके और उन्होंने उसी चाण्डाल के मुख से उनको फटकार बतलाई।

"हे श्रेष्ठ ब्राह्मण अपने मिट्टी के शरीर से मेरे इस मिट्टी के शरीर को हटाना चाहते हो या अपने आत्मा को मेरे आत्मासे दूर करना चाहते हो? किस नीयत से हटो-बचो करते हो?

"ज्ञात होता है, तुम्हारा शरीर गङ्गाजल है उसमें जो सूर्य की परछाईं पड़ रही है, वह मुझ चाण्डाल की मडैया की जल में पड़ने वाली परछाईं से अवश्य भिन्न है?"

"तुम्हारे पास सोने का घर है और मेरे पास मिट्टी की हाँडी ही है। मालूम होता है इनके खोखले भागों में दो भिन्न प्रकार के आकाश हैं।

"घट-घट में बसने वाला जो आत्म रूप सहजानन्द ज्ञान का समुद्र है, उसमें भी तुम्हारा ब्राह्मण चाण्डाल का भेद अभी तक नहीं मिटा।"

"मैं कौन हूँ, यह जानते हो? जागते सोते इस देह में से जिस निर्मल चैतन्य की किरणें फूटती रहती हैं, ब्रह्मा से लेकर रेंगने वाली चींटी तक के शरीर में रमता हुआ जो इस जगत की साखी भरता है, वही मैं हूँ।"

"इस प्रकार की स्थिर बुद्धि यदि है तो गुरु बन, चाण्डाल अथवा ब्राह्मण भेद की बुद्धि को छोड़ दे।"

इसी प्रकार और भी अनेक सन्त महात्माओं ने चरित्र की उच्चता को स्वीकार करते हुए मनुष्य मात्र की समानता का अनुमोदन किया है। भक्ति-मार्ग वालों ने भी अजामिल, यवन, वेश्या आदि के उपाख्यानों द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से जाति श्रेष्ठता पर कुठाराघात किया है। कृष्ण भक्ति के अनुयाइयों ने रसखान आदि जन्म के मुसलमानों को पूजनीय स्थान देकर इसी भाव की वृद्धि की है।

इधर लगभग एक शताब्दी से जगत में मानवता और राष्ट्रीयता का प्रभाव बढ़ रहा है और जो धर्म उनके प्रतिकूल जान पड़ते हैं उनकी तरफ से जनता में विरक्ति का भाव उत्पन्न हो रहा है। अनेक विचारकों ने धर्म और राष्ट्रीयता को सम्मिलित करके भारत के प्राचीन उद्गम सिद्धांतों की घोषणा की और स्पष्ट शब्दों में बतलाया कि अछूतपन हिन्दू धर्म और समाज के लिए कलङ्क स्वरूप है। यह भारतीय संस्कृति का अङ्ग नहीं वरन् बाहर से आया हुआ दोष है। अस्पृश्यता विरोधी विद्वानों ने मानव मात्र की समानता का प्रतिपादन पूर्णतया वेदों और शास्त्रों द्वारा किया जिसके फल से शास्त्रों की दुहाई देकर जनता को बहकाने वाले लोगों का जोर बहुत कम पड़ गया।

तो भी बहुत थोड़े लोगों को छोड़ कर व्यवहारिक रूप से छुआछूत का त्याग जनता न कर सकी। इस कार्य की पूर्ति महात्मा गाँधी के आंदोलन ने की। उन्होंने कहा कि अस्पृश्यता मनुष्य के लिए कलङ्क स्वरूप है और हिंदू समाज में कोढ़ की तरह लगी है। यह मानवता की दृष्टि से ही इतना बड़ा पाप है कि इसके खण्डन के लिए किसी शास्त्रीय प्रमाण की जरूरत नहीं। जो समाज का कोढ़ है उसे हटाये बिना समाज स्वस्थ्य नहीं हो सकता। अस्पृश्यों पर दया करके अस्पृश्यता के रोग को हटाने का प्रश्न नहीं है। अछूतापन को मानकर हिंदू समाज ने जो बहुत बड़ा पाप कमाया है उसका प्रायश्चित तभी होगा जब हिंदू स्वयं पूर्णतया इसे त्याग दें। गाँधी जी ने इस बात पर इतना अधिक जोर दिया और राष्ट्रीय आंदोलन की सफलता के लिए इसे एक ऐसी अमिट शर्त के रूप में पेश किया कि यह आंदोलन शीघ्र ही देश व्यापी हो गया। और उसे बड़ा बल प्राप्त हो गया।

व्यास से लेकर महात्मा गाँधी तक सभी भारतीय विचारकों ने मानवीय समानता का समर्थन किया है और यही वास्तव में भारतीय संस्कृति का आदर्श है। बीच में अनेक सामाजिक कारणों से

और विशेषतः विदेशी समुदायों के आगमन से, जिनमें दास प्रथा का प्रचलन भी था, यहाँ इस कुप्रथा का बीजारोपण हो गया, पर जैसे ही इसके कुफल सम्मुख आने लगे हमारे सामाजिक कर्णधारों ने उस का खंडन कर दिया और समाज को उचित चेतावनी देदी। संतोष का विषय है कि आज भारतीय समाज उस कलंक से मुक्ति प्राप्त करके पुनः अपने प्राचीन आदर्श पर अग्रसर होने लगा है।

सौन्दर्य बनाम कुरूपता

(प्रो० रामचरण एम० ए० महेन्द्र)

सत्य-सेवन तथा सदाचार-सम्पन्नता के मध्य में सौंदर्योपासना नामक कलात्मक ध्येय का भी स्थान है। सौंदर्योपासना करने का अधिकार बुद्धि और अन्तःकरण दोनों को समान रूप से प्राप्त है। युग की तथा देश की बढ़ती हुई मांग यह है कि सत्य सदाचार के साथ साथ भारतीय युवक जीवन की अहिंसक पुनर्रचना में सौंदर्योपासना को भी स्थान दें।

सच्चा सौंदर्योपासक कौन है? वह भलाइयों तथा अहिंसा के सात्त्विक सौन्दर्य का पारखी होता है। अपने दैनिक तथा व्यावहारिक जीवन में इस सौन्दर्य को प्रत्यक्ष करता है। सच्ची सौन्दर्य-उपासना में सभी कुछ आ जाना चाहिए—शील, चरित्र, सुरुचि। जो अश्लील है वह अहितकर है, अवांछनीय है, अतएव कुरूप है। उसका बहिष्कार होना चाहिए। इसके विपरीत जो शीलयुक्त एवं संयत है, सदाचार तथा चरित्र को उज्ज्वल एवं प्रशस्त करने वाला है, वह श्लाघनीय है अतएव सुन्दर है। वह व्यक्ति सुन्दर है, जो सदा सर्वदा शुभ, हितैषी एवं उत्तमोत्तम विचारों में मग्न रहता है, सात्त्विक कार्य करता है, पवित्र वाणी का उच्चारण करता है, उत्तम स्थानों में रमण करता है, जिसकी मनोवृत्तियों का प्रवाह सदैव पवित्रता की ओर उन्मुख रहता है। रस्किन कहा करते थे कि मनुष्य के चरित्र की बुनियाद सौन्दर्य पर कायम रहनी चाहिए। किन्तु यह सौंदर्य बाह्य नहीं आन्तरिक होना अनिवार्य है। सौंदर्य अच्छाइयों को स्वभावतः देखता है, शील-गुण का आदर करता है और सात्विक दैवी गुणों में जीवन-तत्व का निर्माण करता है।

सौन्दर्य का अर्थ शारीरिक बनाव, शृंगार, क्रीम, पाउडर, अश्लील गायन, गंदा नृत्य, व्यभिचार नहीं है। यह तो वासना का प्रदर्शन है। इसी प्रकार के निंद्य प्रदर्शन करना, सिनेमा के कुत्सित चित्रों का अनुकरण कर नाचते गाते फिरना, सौन्दर्य का उपहास करना है। यह सौन्दर्य के नाम पर दानवता का प्रचार है। सौंदर्य का यह बड़ा गन्दा स्वांग है। जिनके मनमें वासना का भयङ्कर नृत्य है इच्छा की उद्दंडता है, व्यभिचारी प्रवृत्तियों का नरक है, वह बाहर से चिकना चुपड़ा आकर्षक होते हुए भी असुन्दर है। अनंत शृंगार से विभूषित नायिका असुन्दर तथा बाह्य कुरूपता लिये हुए है। प्रेम-स्निग्ध पतिव्रता पत्नी सौन्दर्यवती है। सौन्दर्य उत्तम सात्विक भावना का विषय है।

एक वृतांत है कि महापुरुष ईसा अपने कुछ शिष्यों सहित वायु सेवनार्थ जा रहे थे। मार्ग में एक स्थान से घृणित बदबू आई। शिष्यों ने नाक में कपड़ा ठूंस लिया। कुछ दूर चलने के बाद रास्ते में एक मरा हुआ कुत्ता पड़ा दिखाई दिया। उस पर मक्खियां भिनक रही थीं, लहू बह रहा था, पास से निकलते हुए बुरा लगता था। शिष्यगण घृणासूचक शब्द उच्चारण करते हुए एक ओर को निकलने लगे, किंतु महात्मा ईसा रुक गये। उन्होंने बड़ी ममता से मृत कुत्ते को हाथों में उठाया। उनके नेत्रों से दया तथा

ममता के कारण प्रेमाश्रु बहने लगे। उन्होंने बड़ी ममता से कुत्ते को सड़क के एक किनारे पर लिटा दिया और बोले—"कैसे सुन्दर हैं इसके दाँत!"

हम बुरे स्थान में भी अपने काम की सात्विक वस्तु देखें। ईसा सच्चे अर्थों में सौन्दर्योपासक थे। उनकी सूक्ष्म दृष्टि में सौन्दर्य ही सदाचार का मूल था।

सूक्ष्म दृष्टि से विचारने पर हमें दो प्रकार का सौंदर्य उपलब्ध होता है। एक बाह्य सौंदर्य तथा दूसरा आंतरिक सौंदर्य। हम बाह्य सौंदर्य को बुरा नहीं कहते। हमें चाहिए कि हम दैनिक जीवन के अधिक से अधिक अंगों में सौन्दर्य का उपयोग करें, अपने शरीर को स्वच्छ सुन्दर रक्खें, आकर्षक बनायें। अपना गृह स्वच्छ तथा सुन्दर रक्खें, अपनी पत्नी, बाल-बच्चों को सुन्दर रक्खें, अपनी निजी वस्तुओं—उद्यान, कुण्ड, देवालय, विद्यालय, पुस्तकों—सभी को सुन्दर रक्खें। अपनी कलात्मक अभिरुचि का परिचय दें। प्रत्येक स्त्री पुरुष की यह स्वभाविक रुचि होती है कि मैं खूब सुन्दर लगूँ। राष्ट्रों तथा समाजों की भी यही बात है।

किंतु हमें स्मरण रखना चाहिए कि हमारी सौंदर्य भावना का अन्त यहीं न हो जाय। यह बाह्य प्रदर्शन आंतरिक अनुभूति का प्रदर्शन होना चाहिए। बाह्य सौंदर्य के पश्चात् सौंदर्य भावना की दूसरी उत्कृष्ट भूमिका आती है। यह है आंतरिक या आत्मिक सौंदर्य। आत्मिक सौंदर्य ही वास्तविक तथा स्थायी सौंदर्य है। महात्मा गांधीजी का सहज सौंदर्य आत्मिक सौंदर्य ही है। सच्चे सौंदर्य पारखी को सौन्दर्य की विभिन्न स्थितियों को पार कर यहीं आकर रुकना चाहिए।

रस्किन ने सौंदर्योपासना के इस तत्व को स्पष्ट करते हुए लिखा है—"हम देखते हैं कि आजकल के युवक रसिकता की वृद्धि के लिए जितना प्रयत्न करते हैं, उतना शील-संवर्धन के लिए नहीं करते। आज-कल के स्त्री-पुरुष चाहते हैं कि हम नाच सकें, गा सकें, अच्छे चित्रों पर अपनी राय दे सकें, कला पर कुछ बोल सकें इत्यादि। उनकी यह चाह योग्य है, किंतु यदि उनमें इतनी ही चाह है, तो मैं कहूँगा कि उनकी चाह अधूरी है। मैं चाहता हूँ कि इन कलाओं की आत्मा जो सदाचार-सम्पन्नता है, उसकी ओर तरुण स्त्री-पुरुषों का ध्यान आकर्षित करूं। जबतक मनुष्यों को आंतरिक सौन्दर्य (आत्मिक सौंदर्य) की प्रतीति नहीं हो जाती, तबतक यह नहीं कहा जा सकता कि उनका मन सच्चे अर्थों में सुसंस्कृत हो गया है।"

वास्तव में बिना सदाचार की नींव रक्खे आत्मिक सौंदर्य मिलना कठिन है और बिना इस आंतरिक सौंदर्य के सौंदर्योपासना करना अग्नि से खिलवाड़ करना है।

———

आलस्य तो—छोड़िए ही

(श्री ज्वालाप्रसाद गुप्त, एम. ए., एल. टी., फैजाबाद)

शास्त्रों में कर्म की महिमा अच्छी तरह गाई गई है। दर्शन तथा विज्ञान शास्त्र आदि सभी यही बताते हैं कि यह संसार कर्म-मूल है। सभी सांसारिक जीव कर्म-रत हैं। क्या जड़ क्या चेतन सभी कर्म पाश में बँधे हैं। इस अपार संसार में आलस्य के लिये कोई स्थान नहीं। सूर्य, चन्द्र, तारे, पृथ्वी या ग्रहों आदि को देखो, किस प्रकार अपने निरन्तर कर्म में अहर्निशि लवलीन रहते हैं। जिसमें जितनी शक्ति है उसे उसी के अनुसार कार्य करना है। कर्म की अभावावस्था का नाम आलस्य है। वास्तव में कर्त्तव्यनिष्ठ व्यक्ति कभी आलसी नहीं हो सकता, बिना काम किये उसे चैन ही न पड़ेगा। आलसी वे हैं जो अकर्मण्य अर्थात् कर्तव्य की अवहेलना करने वाले हैं। ऐसे लोगों का मस्तिष्क हमेशा पापों और

फजूल बातों ही से भरा रहता है, अंग्रेजी में एवं कहावत है:—आलसी लोगों का दिमाग शैतान का घर है।" जिन्हें अपना कर्त्तव्य कर्म नहीं सूझता पिशाच उन्हें कुकर्म, ढूँढ़ देता है। अकर्मण्य और आलसी लोग दिन रात अप्रसन्न एवं अस्वस्थ रहा करते हैं। इसके विपरीत काम करने वाले सदा प्रसन्न और स्वस्थ रहते हैं। काम करने से केवल शरीर को ही सुख नहीं मिलता, बल्कि मन को भी यथेष्ट शांति और सुख प्राप्त होता है। जो लोग यह कहते हैं कि मुझे तो कुछ काम ही नहीं, क्या करूँ यह उनकी भारी भूल है। राजा प्रजा, सन्यासी, गृहस्थ, अध्यापक, विद्यार्थी, माता पिता तथा संतान नौकर और मालिक आदि जितने भी व्यक्ति हैं अधिकार भेद तथा शक्ति और अवस्था के अनुसार सब के कर्त्तव्य की सीमा निर्दिष्ट है। जो अपना काम नहीं करता, दूसरों का सहारा ढूंढता है, वह आलस्य में पड़कर अपने को निकम्मा बनाता है।

किसी पदार्थ के रक्खे रक्खे नष्ट होने की अपेक्षा उसका किसी काम में लगकर नष्ट होना अच्छा है। इसी प्रकार किसी काम में मन और शरीर को उलझाकर जीवन व्यतीत करना आलस्य में पड़े रहने से कहीं बढ़कर है।

एक प्रसिद्ध विद्वान एमर्सन ने कहा है कि प्रकृति की प्रेरणा मनुष्यों के प्रति यही है कि परिश्रम का मूल्य तुम पाओ चाहे न पाओ, पर कर्म (सत्कर्म) बराबर करते जाओ। तुम जो कर्म करोगे उसका पुरस्कार कभी न कभी तुम्हारे हाथ जरूर आवेगा। तुम हलका काम करो या भारी, खेती करो या महाकाव्य लिखो, कोई काम क्यों न हो, योग्यता के साथ सम्पन्न करो। प्रथम तो उस काम के सम्यक सम्पन्न होने से तुम्हारा चित्त प्रसन्न होगा, नयनादि इन्द्रियगण तृप्त होंगे। इसी को पुरस्कार समझो यदि इस काम से तत्काल विशेष लाभ न हो तो इससे अधीर न हो, किसी न किसी दिन तुम्हें अपने कर्म का यथेष्ट फल मिल ही जायगा। किया हुआ कोई काम कभी निष्फल नहीं होता। किसी अच्छे काम को तुम भली भाँति पूरा कर सकोगे तो वही तुम्हारे लिए पुरस्कार होगा।

उन कामों को भूल कर भी न करो जो नीति विरुद्ध हों। याद रक्खो। जो काम बुरा है उसका परिणाम कभी अच्छा नहीं हो सकता। बबूल के पेड़ में आम कभी नहीं फल सकता। बुरे काम का अन्तिम फल परिताप ही है। अपकर्म करने से शारीरिक और मानसिक अनेक हानियाँ होती हैं और लोगों में भी निन्दा होती है अपकर्मियों का सभ्य समाज में कहीं और कभी भी आदर नहीं होता और उन्हें सब लोग घृणा की दृष्टि से देखते हैं।

कोई भी काम जो शारीरिक या मानसिक परिश्रम से सम्बन्ध रखता हो और लोकोपकारी अथवा जीवन निर्वाह के लिए आवश्यक हो कदापि बुरा नहीं कहा जा सकता-यदि वह ईमानदारी और सच्चरित्रता के साथ सम्पादन किया जाय। इस प्रकार कुली का काम, किसान का काम, शाक भाजी बेचने का काम, क्लर्क का काम, ट्यूशन काम, बढ़ई, कुम्हार, लोहार आदि का काम कदापि निन्द्य नहीं हैं। नीचता, निन्दा तथा कलङ्क तो उन्हीं कामों के करने में हैं जो बुरे और नीति विरुद्ध हों। काम करने की योग्यता और शक्ति रखने पर दूसरे का आश्रित होना नीचता ही है। इस सम्बन्ध में एक कहानी उल्लेखनीय है।

एक समय एक बङ्गाली बाबू इङ्गलैंड से लौटकर स्वीटजरलैण्ड देश देखने गये वे वहां एक बड़े रेल के स्टेशन पर उतरे और एक कुली को पुकारा। कुली ने आकर उनका सामान उठाया। बङ्गाली महोदय ने उससे किसी होटल में ले चलने को कहा औ वह उनको अपने साथ लेकर चला।

रास्ते में उस कुली ने उनसे पूछा—"महाशय, आप किस देश के रहने वाले हैं? आपका स्वरूप देख कर यह नहीं मालूम होता कि—आप किस देश के निवासी हैं।"

बाबू—मैं तो भारतवर्ष का निवासी हूं।

कुली—मैं आपसे कुछ बात और पूछना चाहता हूँ। क्या आप मेरे प्रश्न का उत्तर देने की कृपाकरेंगे।

बाबू—हाँ हाँ, पूछो। मैं यथा साध्य अवश्य उत्तर दूँगा।

तब कुली निर्भय होकर उनके साथ वार्त्तालाप करने लगा। कुली की विद्वतापूर्ण बातें सुनकर बाबूजी ने आश्चर्य से कहा—"तुम पढ़े लिखे मालूम होते हो, फिर कुली का काम क्यों करते हो?"

कुली ने कहा—"कोई काम न मिलने पर दूसरे का आश्रित और कंटकरूप होने की अपेक्षा मैंने कुली का काम करना अच्छा समझा। आज मैं कुली का काम कर रहा हूं परन्तु कोई दिन ऐसा भी आ सकता है कि मैं पार्लमेन्ट का सभापति हो सकूँ।"

स्वीटजरलैण्ड का कुली विद्वान होते हुये भी कोई उपयुक्त काम न मिलने पर गठरी ढोकर जीवन निर्वाह करना अच्छा समझता है परन्तु दूसरे का आश्रित और कंटक रूप होना नहीं चाहता। क्या यह बड़प्पन की बात नहीं है?

संसार की जितनी भी उन्नतिशील जातियाँ हैं सब ने निर्विवाद कर्म का महात्म्य स्वीकार किया है। भारतवर्ष की तरह अमेरिका और यूरोप में भीख माँगने की प्रथा नहीं है और वहाँ भीख लेना जैसा लज्जाजनक और हीनतासूचक कार्य समझा जाता है वैसा ही भिक्षा देना भी आलस्य को सहारा देना कह कर बहुत ही बुरा समझा जाता है। इसीलिये उक्त देशों में किसी को भिखारी कहना सख्त गाली समझी जाती है। अमेरिका के बड़े २ कालेजों के कितने ही निर्धन विद्यार्थी गर्मी की छुट्टियों में गाड़ी हाँक कर, धर्म मन्दिरों में घंटा बजाकर, होटलों में बर्त्तन साफ कर, नाटयशाला में भाग लेकर तथा और भी ऐसे ही कितने काम करके रुपया कमाते और उन रुपयों से कालेज का खर्च चलाते हैं। इसमें वे लोग लज्जा नहीं समझते। परन्तु दूसरे का कंटकरूप होना अथवा परउपार्जित धन सहायता के रूप में लेना वे अवश्य महान लज्जा का विषय समझते हैं।

खेद है कि हमारे इस आलस्य प्रधान भारत देश के निवासियों में यह भाव जागृत नहीं होता, इसी लिये वे अकर्मण्यता और आलस्य को घृणित नहीं समझते। याद रहे कि मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु आलस्य ही है—"आलस्यंहि मनुष्याणां शरीरस्थो महारिपुः।"

हमें चाहिये कि हम किसी समय भी बेकार न बैठें। संसार का इतिहास कर्म योगियों के इतिहास से भरा है। गीता में भगवान् कृष्ण ने कर्म की प्रधानता पर अर्जुन को उपदेश दिया है। जनक आदि ने कर्म करके ही सिद्धि पाई है। हमारे महान् नेताओं ने अपने जीवन के एक २ पल का सदुपयोग किया है। हमारे प्रधान मन्त्री पं० जवाहरलालजी अपने इस ६७ वर्ष की अवस्था में भी नित्य १८ घण्टे कार्य करते हैं। अतः हमारा सच्चा धर्म यही है कि आलस्य त्याग कर-कर्मवीर बनें।

---

* पेट को कब्र मत बनाइए *

संसारमें सभीजीव ईश्वरके बनाये हुएहैं। पर उनमें सर्वश्रेष्ठ मनुष्य योनि है, इसका मुख्य कारण मनुष्यों में ज्ञान है। हमारे धर्म ग्रन्थों में लिखा है कि—"आहार, निद्रा, भय, मैथुनादि सब जीवों और मनुष्यों में बराबर हैं, परन्तु एक ज्ञान ही ऐसा है जो मनुष्यों में अधिक है। अतः ज्ञान शून्य मनुष्य भी पशु है। प्रत्येक जीव को सबसे प्रथम आहार की ही आवश्यकता पड़ती है, अतएव विचारणीय प्रश्न है कि इस संबंध में कैसा ज्ञान होना चाहिये। प्रकृति ने जिन जीवों के लिये जो वस्तु उपयोगी समझी वह उनके शरीर में सृष्टि करते समय ही बना दिया।

मनुष्य के नवजात शिशु के लिये दांत बनाना

अनुचित समझा तो उन्हें बेदांत वे पैदा किया और जिनके लिये दांत की आवश्यकता समझी उन्हें वैसे ही दांत दिये जैसे शाकाहारी मनुष्यों के लिये छोटे २ दांत और मांसाहारी जीवों के लिये बड़े २ दांत। बिल्लियों के आँख में ऐसी शक्ति दी कि वह रात में अपने भोजन (चूहे) को देख सकें और उसके पाँव में ऐसी शक्ति दी जिसका आहट चूहे न सुन सकें। सिंहादिक प्राणियों की रीति भांति तथा आकृति और स्वभाव मनुष्यों की रीति भांति और आकृति से विलक्षण ही है। उनके दांतों और नखों की रचना मनुष्य के नख और दांतों से बहुत ही भिन्न है। सिंहादिकों के दांत ऊंचे और बड़े तीक्ष्ण शस्त्र की तरह होते हैं और वह अपने दांतों से हड्डी तथा कच्चे मांस को भी चबा डालते हैं। उनकी जठराग्नि ऐसी तीव्र होती है जो कि कच्चे मांस और हड्डी को भी भस्म कर डालती है। यह बातें मनुष्यों में नहीं पाई जातीं। बन्दर की रीति भांति और आकृति कुछ २ मनुष्य से मिलती जुलती है। वह कितने ही दिनों का भूखा क्यों न हो तब भी मांस कदापि न खायगा। इसी प्रकार जिस जिले या प्रान्त के लिये जो वस्तु लाभ कारी समझी उसकी पैदावार वहां प्रकृति ने अधिक कर दिया, जैसे पंजाब में गेहूँ, मारवाड़ में बाजरा, बिहार बङ्गाल में चावल और तेल।

यदि प्रकृति मनुष्यों के लिये मांस अधिक उपयोगी समझती तो मनुष्यों के भी बड़े २ दांत मांस भक्षण योग्य बना देती। इस लिये मानना पड़ेगा कि सृष्टि-कर्ता परमात्मा ने मनुष्यों को मांस भक्षण की आज्ञा नहीं दी है। वास्तव में भिन्न २ प्रकार के भोजनों में निरामिष (बिना मांस मछली) भोजन ही सर्व श्रेष्ठ है। जो ताकत चना गेहूं, मेवा शाक, फल और दूध में है वह ताकत मांस और मांस के शोरबे में नहीं है। इसी से हमारे वैद्यक शास्त्र में लिखा है कि गर्भवती स्त्री घृत और दूध का ही अधिक सेवन करे और खट्टी तीखी वस्तुओं को मांस को छुवे भी नहीं।

बालक पैदा होने के बाद जब तक उसके दांत न निकल आवें तब तक उसको अन्न कदापि न खिलावें! फिर दांत निकल आने पर दिन में तीन चार बार उसको थोड़ा २ करके दूध का ही सेवन करावे, मांस का और उसके शोरबे का आहार निषिद्ध है। वैद्यक शास्त्र में जितने गुण दूध, मक्खन और घृत और अन्न तथा फल और शाकादि के सेवन में लिखा है उतने गुण मांस के सेवन में नहीं लिखा है बल्कि मांस सेवन के बड़े दोष लिखे हैं। इंग्लैंडादि विदेशों में भी बहुत से लोगों ने मांस खाना छोड़ दिया है। इसी वास्ते उन देशों में बहुत से फलाहारी होटल खुल गये हैं। धर्म ग्रन्थों में लिखा है कि जो स्त्री पुरुष मांस आदि अभक्ष्य भोजन का सेवन करते हैं वह मर कर राक्षस या पिशाच अथवा भूत योनि में जन्म लेते हैं और उनकी सन्तान भी क्रूर स्वभाव तथा दुराचारी उत्पन्न होती है। इस वास्ते कभी भी मांस आदि अभक्ष्य भोजन का सेवन नहीं करना चाहिये।

जितने भी पहलवानी सीखने वाले हैं वह सब रात्रि में कच्चे चनों को धोकर पानी में भिगो देते हैं और सवेरे व्यायाम करने के पश्चात् उन चनों को चबाकर ऊपर से उसका पानी पी लेते हैं। कच्चा चना और उसका पानी बल को बढ़ाता है। आज तक कोई भी पहलवान कसरत करके मांस खाते और उसका शोरबा पीते नहीं देखने में आया है। इससे सिद्ध हुआ कि केवल एक अन्न चने के बराबर भी मांस में गुण नहीं है। जो लोग मछली आदि खाने वाले हैं उनके पसीने से मछली आदि की दुर्गन्ध आती है, शारीरिक बल भी उनमें कम होता है, क्योंकि उनका बदन ढीला रहता है। जिन देशों में मछली और भात ही खाया जाता है, गेहूँ चना इत्यादि नहीं उन देशों के मनुष्य फौज में भरती नहीं किये जाते। उन देशों के मनुष्य जिस प्रकार से शारीरिक उन्नति नहीं कर पाते उसी तरह यह लोग आत्मिक उन्नति भी नहीं कर सकते। क्योंकि इनकी बुद्धि मांस खाने से अति मन्द तथा

स्थूल हो जाती है।

संसार में सबसे अधिक चित्त को मलिन करने वाली दो वस्तुयें, मांस तथा मद्य हैं, इसीलिये उक्त दोनों के सेवन करने वालों का योग और वेदान्त में अधिकार का निषेध है। हम लोगों के आर्य ऋषि गण भी विशेष परीक्षा द्वारा निरामिष भोजन को ही सर्व श्रेष्ठ पाकर सभी धर्म ग्रन्थों में विशेष रूप से इसकी व्यवस्था कर गये हैं और वेद मन्त्रों में भी मांस भक्षण का निषेध है:—

न हिंस्यात्सर्वाभूतानि। पशून्पाहि।(यजुः अ०१) अर्थात् किसी भी जीव की हिंसा न करो। पशुओं की रक्षा करो।

दुष्ट हिंसायाम्-प्राणि हिंसायां सत्यांमद्भोजनं तद् दुष्टम् (वैशेषिक सूत्र)

अर्थात् प्राणियों की हिंसा के होने पर जो भोजन बनता है वह भोजन दुष्ट होता है।

ना कृत्वा प्राणि हिंसा मांस मुत्पद्यते क्वचित्।
न च प्राणि वधः स्वर्ग्यस्तस्मान्मांस विवर्जयेत्॥
मनु० अ० ५ ॥ ४८॥

अर्थात् प्राणियों के मारे बिना कहीं मांस नहीं उत्पन्न होता और प्राणियों का मारना स्वर्ग का कारण नहीं है किन्तु नरक ही का कारण है अतः मांस को छोड़ देवे।

मासिमास्यश्वमेधेनयो यजेतयुधिष्ठिर।
न खाद यतियो मांस सम मेतन्मतं मम॥
न भक्षयतियो मांस न चहन्यान्न घातयेत्।
तन्मित्रं सर्वभूतानां मनुः स्वायं भुवोऽब्रवीत्॥
(महाभारत)

अर्थात् प्रति मास जो पुरुष अश्वमेध यज्ञ को करता है, हे युधिष्ठिर? और जो पुरुष किसी भी यज्ञ को न करे परन्तु मांस को नहीं खावे तो दोनों फल बराबर हैं। जो मांस को नहीं खाता है, और न किसी भी जीव को मारता है न दूसरे को मारने देता है, स्वायंभूमनु कहते हैं, वह सम्पूर्ण भूतों का मित्र है।

मुसलमानी मत में भी जीवों को मारना वर्जित है। जैसा कि कहा गया है:—

मैखुरों मसहफ़ बसो जो आतश अन्दर काबा जन्।
साकने बुत खाना बाशी मर्दम आजारी मकुन।१।
मबाश दर पए आजार हर चखाई कुन।
के दर तरीक तेमां जुज अर्जी गुनाहे नेस्त।२।

इसका सारांश यह है कि-"जो पाप शराब पीने और काबा में आग लगाने आदि में है उससे कई गुना पाप जीवों को मारने में है। अतः किसी जीव को दुःख मत दो। जीवों को एक भी दुःख मत दो और जो चाहो सो करो क्योंकि हमारे तरीके में इससे बढ़कर कोई गुनाह(पाप)नहीं है।" तब भला बताइये कि मांस खाने के लिये जीव हत्या करने में कितना पाप है।

गुरु नानक जी ने भी मांस खाने का निषेध किया है:—

जे रक्त लगे कपड़े जामा होय पलीत।
ते रक्त खाये मानसा क्यों होवे निर्मल चीत॥

अर्थात् यदि किसी पशु या पक्षी का जरा सा भी खून किसी वस्त्र में लग जाता है तब वह वस्त्र अपवित्र हो जाता है उसी खून का ही मांस बनता है, उसी मांस को जो पुरुष खाते हैं उनका चित्त कैसे शुद्ध हो सकता है, अर्थात् कदापि नहीं हो सकता।

हमारे धर्म ग्रन्थों में तो यहाँ तक लिखा है कि जो गृहस्थाश्रमी प्रति दिन अनजान में ओखली कूटने, चक्की पीसने, चूल्हे में आग जलाने, झाड़ू, देने तथा जल इत्यादि से जो जीव हत्या करता है उस पाप प्रायश्चित के लिये प्रतिदिन पंच महायज्ञ करना चाहिये जैसा कि:—

कण्डनी पेषणी चुल्ली उदू कुम्भी च मार्जनी।
पञ्च सूना गृहस्थ स्य ताभ्यः स्वर्गं न विन्दति॥

अतः उपरोक्त पांच प्रकार से अदृष्ट जीव हिंसा के लिये तो प्रायश्चित लिखा है, और जानकर जीव हिंसा करने वालों का तो सिवाय दूसरे जन्म में बदला देने के कोई प्रायश्चित नहीं है।

* गायत्री महामन्त्र की मूलभूत प्रेरणा *

सामूहिकता का उपासना क्षेत्र में भी प्रवेश कीजिए।

(पं० श्रीराम शर्मा आचार्य)

गायत्री मन्त्र के 'नः' शब्द में इस बात का संकेत है कि माता को 'एकाकी पन' नहीं सामूहिकता पसन्द है। कई व्यक्ति सबसे अलग रह कर अकेले-अकेले घुन मुन करते रहते हैं, यह प्रवृति चिन्तन के लिये थोड़े से क्षणों में तो उपयुक्त हो सकती है पर जीवन के सर्वाङ्गीण विकास में यह अकेले पन की भावना बड़ी घातक है। यह स्वार्थ परता का ही एक रूप है। पिछले २, ३ हजार वर्षोंमें यह प्रवृत्ति पनपी और फूट एवं स्वार्थपरता ने बढ़ कर राष्ट्र का सत्यानाश कर दिया। ऋषि महर्षियों की घर-घर जाकर धर्म का अलख जगाने परम पुनीत परम्परा का लोप होकर साधु ब्राह्मणों में अकेले अपना भजन करने, दुनियाँ को स्वप्न एवं मिथ्या बताकर स्वयं तो गुलछर्रे उड़ाने और लोक सेवा के कार्यों से दूर भागने की दुष्ट मनोवृत्ति पनपी फल स्वरूप देश का नैतिक स्तर गिर गया। जनता की धर्म भावनाएं नष्ट हो गई। क्षत्रिय, आल्हा ऊदल की तरह अपना मान और क्षेत्र बढ़ाने के लिये आपसमें लड़नेकटने लगे, फल स्वरूप राजनीतिक विदेशियों की गुलामी गले पड़ी। वैश्यों की कम तौलने, कम नापने, मिलावट करने, खराब घटिया वस्तुएँ देने, ज्यादा मूल्य लेने आदि की कुप्रवृत्तिने देशी व्यापारियों की ईमानदारी पर से जनता का विश्वास उठा दिया। फलस्वरूप विदेशी व्यापारी मालामाल हो गये। स्वार्थ परता—अकेले लाभ उठाने की मनोवृत्ति-एक ऐसी नीचता है कि जहां भी वह रहेगी वहाँ सत्यानाश उत्पन्न करेगी।

हमेशा बढ़ते वे लोग हैं, जो दूसरों को साथ लेकर चलते हैं। संगठित रहते हैं,एक दूसरे को बढ़ाते हैं और मिल जुल कर खाते हैं। सर टामस राने शाहजहाँ की लड़की का इलाज करके बादशाह से मुँह मांगा इनाम यह प्राप्त किया कि "मेरे देश वासियों के माल पर से महसूल उठा लिया जाय।" अपने व्यक्तिगत स्वार्थ को तिलांजलि देकर अपने समाज के स्वा[र्थ] को प्रमुखता देने वाले लोग जिस देश में होते हैं व[ह] सर टामस रो के देश इङ्गलैंड की भांति तरक्की कर[ते] हैं और जहाँ ५६ लाख स्वार्थी परायण साधु संतों[की] आपस में लड़कटकर बर्बाद होने वाले आल्हा ऊद[ल] की; रेवड़ी के लिए मसजिद ढा देने वाले जयचन्[द] मीर जाफरों की; थोड़े से निजी स्वार्थों के लिए [उ]द्योग पर से सारी जनता का विश्वास उठा देनेवा[ले] वैश्यों की भर मार होती है—वह देश भारतव[र्ष] की तरह अविद्या, गरीबी, गुलामी, बेबसी, बेका[री] के नाना विधि त्रास सहता है। इतिहास साक्षी है [कि] कभी कोई कौम उठी है तो सामूहिकता की प्रवृ[त्ति] को अपना कर बढ़ी है, जिसने अकेले पन को अ[प]नाया वह चाहे व्यक्ति हो, चाहे राष्ट्र, अवश्य ह[ी] बर्बाद होगा।

गायत्री महा मंत्र में अनेकों महत्व पूर्ण तत्व भ[रे] हुए हैं। उनमें एक अत्यधिक उच्च कोटि की प्रेरणा-सामूहिकता की है। नः शब्द के द्वारा माता बारब[ार] अपने हर सच्चे पुत्र को—सच्चे उपासक को—एका[की] स्वार्थ परायण न बना कर सामूहिकतावादी लोकसे[वी] बनने की प्रेरणा करती है। जो माता की वाणी [को] सुनते हैं, उस पर ध्यान देते हैं और उसे मानते हैं [वे] ही सच्ची मातृभक्ति का परिचय देते हैं और वे [ही] माता का सच्चा अनुग्रह प्राप्त करते हैं। घूंसखो[र] दरोगा की तरह कुछ जप अनुष्ठान की रिश्वत जे[ब] में डाल लेने और बदले में अनुचित लाभ दे देने [का] स्वभाव माता का नहीं है! जो लोग माता के अन्[तः]करण को नहीं पहचानते उनकी बात को नहीं सुन[ते] मानते। अपनी ही स्वार्थ परता की तराजू से, मा[ता] को भी अपने लिये अनुष्ठान समेटनी वाली स्वा[र्थ] परायण सेठानी जैसा मानते हैं वह सच्चे अर्थों [में] अज्ञानी हैं। उन्हें कितने अंशोंमें माताका अनुग्रह [प्राप्त]

वात्सल्य मिल सकेगा यह कह सकना कठिन है।

विगत तीस वर्षों से हमने एक निष्ठ भावसे माता की उपासना की है और अपनी ही श्रेणी के अन्य अनन्य उपासना करने वालों की साधना की प्रगति एवं गतिविधियों पर निरन्तर बारीकी से ध्यान रखा है। इस लम्बे समय के गम्भीर अनुभव का एक मात्र निष्कर्ष एक ही है कि माता किसी साधक की व्यक्तिगत पूजा उपासना से जितनी प्रसन्न होती है उससे अनेकों गुनी प्रसन्नता उसे साधक की परमार्थ परायणता से होती है। इसी के लिए वह अपने सच्चे कृपा पात्रोंको प्रेरणा भी करती है और प्रत्यक्ष आदेश देती हैं। नारद, शंकराचार्य, दयानन्द, विवेकानन्द आदि को एकान्त साधना में से कान पकड़ कर हटाने और लोक सेवा में जुटा देने का कार्य उसी महा शक्ति ने किया। जिस पर भी वह प्रसन्न होती है उसे निश्चित रूपसे यही प्रेरणा देती है। क्योंकि आत्मशक्ति, पुण्य संचय, विश्वहित, सुख शान्ति, स्वर्ग मुक्ति, समृद्धि सम्पत्ति, शक्ति सफलता, कीर्ति प्रतिष्ठा के सभी लाभ परमार्थ परायणता में सन्निहित हैं। स्वार्थी के लिए लाभ बहुत स्वल्प हैं, जितना श्रम किया उसकी मजदूरी मात्र का वह अधिकारी है। अनेकों का हित साधन करने से तो अपने आप ही वह साधना अनेक गुनी फल दायक हो जाती है। माता अपने सच्चे साधक को यही सच्चा मार्ग दिखाती है।

हमें स्वयं भी यही मार्ग बताया गया है। २४ महा अनुष्ठान पूरा करने के साथ २ सदा यही प्रेरणा मिली कि जितना समय भजन में लगे उससे अधिक समय परमार्थ में, लोक सेवा में लगे। जो अपनी साधना इन दिनों होती है उसे अपने निज के लिए संग्रह न करके उसका पुण्य फल प्रायःनित्य ही गायत्री परिवार के आवश्यकता ग्रस्त लोगों को बाँट देते हैं, जिससे वे अपनी कठिनाइयों को पार कर सकें। अपने को बिलकुल खाली हाथ—पुण्य फल से भी खाली रहने और निरन्तर धर्म भावनाओं का प्रसार करने में संलग्न रहने का आदेश हुआ है। बिना राई रत्ती विचार संकोच किये हमारी गतिविधि उसी प्रकार चल रही है जिस प्रकार नन्हा सा बालक उधर ही चल देता है जिधर उसकी माता उसे उँगली पकड़कर चलाती है। हम देखते हैं कि हमारी ही जैसी प्रेरणाएँ अन्य अनेकों उन लोगों की आत्माओं में भी हो रहीं हैं जो सचमुच माता के अधिक समीप पहुँच चुके हैं। उन अभागे दुराग्रहियों को माताकी कृपा से बहुत दूर ही मानना चाहिए जो अपनी माला जपने में तो लगे रहते हैं पर दूसरों को धर्म प्रेरणा देने से जी चुराते हैं। मानना होगा कि माता ने उनकी अन्तरात्मा का अभी स्पर्श नहीं किया। अन्यथा उन्हें एकाकी न रहने देती। जिनके अन्तःकरण में माताका प्रकाश आ रहा हो उनके लिये यह सम्भव नहीं कि वे परमार्थ परायणता से अपने को रोक सकें। उन्हें जनता जनार्दन के सेवा के लिये कदम बढ़ाना ही होता है। उन्हें पंगु धर्म को सहारा देने, आगे बढ़ाने के लिये धर्म सेवाके लिये अपना कंधा देना ही होता है। वह केवल जपसे सन्तुष्ट नहीं रह सकता उसे धर्म सेवा के लिये कुछ लोक संग्रह—सामूहिक कार्यक्रम अपनाना ही पड़ेगा। हम देखते हैं कि माताके सच्चे अनेकों कृपापात्र अपने अन्तःकरण की प्रबल प्रेरणा से इस मार्ग पर तेजी से बढ़ते चले जा रहे हैं।

यों धर्म सेवा के अनेक मार्ग हैं—अनेक कार्यक्रम हैं, समय-समय पर उनकी उपयोगिता एवं आवश्यकता भी रही है, और रहती है। परिस्थितियों के अनुसार अनेक कार्यक्रम सामने आते हैं परिस्थिति बदलने पर दूसरे बदल जाते हैं। इतिहास बदलता रहा है, भूतकाल में अनेकों अवसरों पर ऋषियों ने अनेक प्रकार—एक दूसरे सर्वथा भिन्न प्रकार के धर्मानुष्ठानों की व्यवस्था की है। इसमें किसी धर्मानुष्ठान की निन्दा प्रशंसा या लघुता महानता नहीं है। सभी उत्तम हैं पर जिस अवसर के लिए जो बात उपयुक्त होती है उस समय वही विधान प्रचलित किया जाता है। चतुर वैद्य—रोगी की स्थिति, देश काल पात्र को ध्यान में रख कर ही दवा देता है, यद्यपि उसके दवाखाने में एक से एक बहुमूल्य औषधि [illegible] होती है। [illegible] काल में उस समय की [illegible] है

अनुसार अनेकों प्रकार के यज्ञ, जप, कीर्तन, पूजन, भजन, कथा वार्ता आवश्यक समझे गये और अपने अपने समय के संदेश वाहक उनका प्रसार करने के लिए जनता का मार्ग दर्शन करने के लिए आये—पर वह विधान सदा के लिए एक समान उपयुक्त न रहे। यदि सदा एक ही आवश्यकता—एक ही व्यवस्था ठीक होती तो सब ऋषि, संत, अवतार, देवदूत तथा धर्म प्रचारक एक ही बात कहते। पर ऐसा नहीं होता—वे समय की आवश्यकता एवं उपयुक्तता के अनुकूल बात बताने आते हैं। इसलिए मोटी दृष्टि से देखने में इन ऋषियों की बातों में, पद्धतियों में, प्रेरणाओं में—योजनाओं में अन्तर दिखाई देता है। पर वस्तुतः उनके मूल लक्ष्य में पूर्ण एकता होती है। अन्तर केवल देश-काल, पात्र के अनुसार बदली हुई परिस्थितियों में बदले हुए कार्यक्रम को अपनाने मात्र का होता है। विवेक शील लोग इस सूक्ष्म सत्य को समझते हैं तदनुसार वह किसी अमुक काल में अमुक सन्त द्वारा बताई हुई पद्धति पर सदा अड़े रहने का दुराग्रह नहीं करते वरन् समय की आवश्यकता को उसी प्रकार तुरंत स्वीकार कर लेते हैं जिस प्रकार बुद्धिमान विद्यार्थी क्लास बदलने पर नई पुस्तकें स्वीकार करने में मास्टर से—या समझदार रोगी बीमारी बदलने पर दवा बदलने में डाक्टर से—तकरार नहीं करते।

आज की सर्वोपरि आवश्यकता यह है कि—असद् बुद्धि ने—दुर्विचार, कुसंस्कार, ईर्ष्या, द्वेष, कलह, चिन्ता, भय, आवेश, क्रोध, छल, दंभ, कपट, असंयम एवं स्वार्थ रूपी भयंकर आकाश को आच्छादित करके समस्त विश्व के ऊपर अनेक प्रकार की आपत्तियाँ उपस्थित करदी हैं, उन्हें हटाया जाय। परस्पर असद् व्यवहारों से उत्पन्न अनेकों भयंकर दुष्परिणामों के कारण सभी दुखी हैं। महामारी, अस्वस्थता एवं नाना प्रकार के रोगों की तूफानी अभिवृद्धि, प्रकृति का सन्तुलन बिगड़ जाने से अतिवृष्टि, अनावृष्टि, भूकम्प, तूफान आदि उपद्रवों के कारण प्रजा के धन जन की भारी हानि हो रही है। यदि आकाश में मंडराती हुई असुरता की ये घटायें आज सामने परिस्थिति हैं उनमें भी असंख्य गुनी वृद्धि हो सकती है और मानव जाति ही नहीं मानवेतर अन्य जीव जन्तुओं का भी जीवन खतरे में पड़ सकता है।

इन परिस्थितियों को सुधारने के लिए जहाँ अन्य भौतिक प्रयत्नों की आवश्यकता है वहाँ कुछ आध्यात्मिक उपचार भी करने जरूरी हैं। सभी लोग राजनैतिक एवं आर्थिक दृष्टिकोण से समस्याओं को सुलझाने में लगे हुए हैं पर जब तक आध्यात्मिक उपचारों का भी उनमें समावेश न होगा तब तक इन सांसारिक प्रयत्नों पर किया हुआ अधिक से अधिक प्रयत्न भी आशा जनक परिणाम उपस्थित न कर सकेगा। अन्तरिक्ष में जो दूषित आसुरी तत्व अत्यधिक मात्रा में भर गये हैं वे दुर्बल मस्तिष्कों पर कब्जा करके उन्हें कुकर्म करने को प्रेरित करते हैं इस प्रकार दिन-दिन मनुष्यों में दुष्प्रवृत्तियाँ बढ़ती जाती हैं और उनके फलस्वरूप विपत्तियाँ भी सुरसा की तरह मुँह फाड़ती जाती हैं। सूक्ष्म आकाश को शुद्ध करने, मनुष्यों में सत्प्रवृत्तियाँ पैदा करने के लिए—विश्व के ऊपर छाई हुई भयङ्कर घटाओं को शांत करनेके लिए-अध्यात्मिक प्रयत्नों में व्यापक गायत्री उपासना की भारी आवश्यकता है। जिस प्रकार अनेकों दुष्टों ने अपनी दुष्प्रवृत्तियों से वातावरण को दूषित किया है उसी प्रकार अनेकों सज्जनों की सत्प्रवृत्तियाँ मिल कर उसका समाधान भी कर सकती हैं। सेना का मुकाबिला सेना से किया जाता है। संसार के लिए विपत्तियाँ उत्पन्न करने वाली दुष्प्रवृत्तियों का निवारण भी धर्मात्माओं की धर्म सेनाके शक्तिशाली धर्मोपचारों द्वारा ही होगा। ऐसे उपचारों में गायत्री की शक्ति सर्वश्रेष्ठ है। वर्तमान काल की विपन्न परिस्थितियों में व्यक्तिगत सुख शान्ति बढ़ाने के लिए एवं संसार की व्यापक वातावरण को शुद्ध करने के लिए—सर्वोत्तम उपचार गायत्री के माध्यम से ही हो सकता है। इस समय के रोग की ठीक—अचूक एवं रामबाण चिकित्सा—"गायत्री के सामूहिक यज्ञानुष्ठान" ही सुनिश्चित है।

गायत्री तपोभूमि द्वारा गायत्री परिवार का संग-

बड़ा ही महत्व पूर्ण कदम उठाया गया है। संस्था अपनी सामर्थ्य भर लोगों को प्रेरणा दे कर गायत्री उपासना के सामूहिक कार्यक्रमों के स्थान स्थान पर विविध आयोजन करा रही है। पर इतने से ही काम चलने वाला नहीं है। अब प्रत्येक गायत्री उपासक को स्वयं एक सजीव गायत्री मन्दिर बनना होगा। गायत्री माता की महिमा बढ़ाने के लिए पिछले—अज्ञानान्धाकार युग में तमसाछन्न की गई इस महाशक्ति को पुनः प्रकाशवान बनाने के लिए हम सब को मिल जुल कर साधारण नहीं,–असाधारण प्रयत्न करना होगा। एकाकी गायत्री उपासना तक सीमित न रह कर इसे सामूहिक धर्मानुष्ठानों का रूप देना होगा ताकि माता को भूले हुए अगणित मनुष्य अपनी जननी को पहचान सकें, उसकी गोदी में चढ़ कर, अञ्चल पकड़ कर, सच्चा वात्सल्य सुख पा सकें। माता से उसके खोये हुए पुत्रों का मिलाप कराने के लिए किया हुआ सत्प्रयत्न कितनी उच्चकोटि का है यह शब्दों में कहना और अक्षरों में लिखना संभव नहीं। जिन्होंने इस कार्य प्रणाली को अपनाया है वे ही जान सकते हैं कि केवल जप करते रहने की अपेक्षा यह सामूहिक गायत्री आयोजन कितने अधिक आनन्द एवं सन्तोष प्रदान करने वाले हैं। निस्संदेह सामूहिकता की प्रवृत्ति मानव प्राणी की सर्वोत्कृष्ट विशेषता है। गायत्री उपासना जैसे परम पुनीत कार्यक्रम में इस प्रवृत्ति का जुड़ जाना तो 'सोना और सुगन्ध' का उदाहरण बन जाता है।

गायत्री परिवार के सभी लोग यथा संभव निज की उपासना करते हैं। कितने ही निष्ठावान् व्यक्ति नियत संख्या में अपनी मालायें पूरी करते हैं, गायत्री चालीसा पाठ, मंत्र लेखन आदि अनुष्ठानों में कितने ही नर नारी लगे हुये हैं; कइयों ने बड़ी कठोर तपश्चर्याओं के साथ साधना का व्रत लिया है। यह सभी निष्ठावान् उपासक भूरि-भूरि प्रशंसा के योग्य हैं। आत्म बल की वृद्धि, आन्तरिक पवित्रता की स्थापना, प्रभु शरणागति, बड़े ही महत्व पूर्ण तत्व हैं। इन्हें उपासना के द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। पर इन आवश्यक है। अन्यथा यह सब भी कंजूस सेठ के धन संग्रह करते रहने की तरह एक आध्यात्मिक स्वार्थ परता ही रह जावेगी। प्रसन्नता की बात है कि अखण्ड ज्योति के पाठक और गायत्री परिवार के सदस्य इस तथ्य को अधिक दृढ़ता पूर्वक समझते जा रहे हैं और धर्म प्रचार को भी तपश्या का, साधना का, एक आवश्यक अङ्ग मानते हैं और उसके लिए भी निरन्तर प्रयत्नशील रहते हैं।

गायत्री मन्त्र में एक महत्व पूर्ण संदेश सामूहिक धार्मिक आयोजनों का है। यज्ञानुष्ठान इसके लिए सर्वश्रेष्ठ कार्यक्रम है। जो धर्म फेरी लगाने को तैयार हैं। दूसरों के पास जाने में, शुभ कार्य के लिए दूसरों को समझाने में जिन्हें अपनी हेटी, संकोच तथा बेइज्जती नहीं मालूम पड़ती ऐसे मिलन सार स्वभाव के व्यक्ति बड़ी आसानी से चाहे जहाँ इस प्रकार के छोटे बड़े आयोजन सम्पन्न कर सकते हैं। यज्ञ भारतीय धर्म का आदि तथ्य है। विगत दो हजार वर्षों में नाना प्रकार के मत मतान्तर एवं सम्प्रदाय बरसाती घास पात की तरह उपज पड़े और उनने अविधर्म वेद धर्म के प्रति अनास्था, उपेक्षा उत्पन्न करके अपने चलाये सम्प्रदाय को ही सब कुछ बताया! बेचारी जनता शास्त्रीय तत्वज्ञान से रहित थी, चाहे जिस के बहकावेमें आकर हवा द्वारा उड़ाये हुए, पत्तों की तरह बहक गई, गायत्री माता की तरह यज्ञ पिता की भी दुर्गति हुई! पहले तो यज्ञों का प्रचलन ही बन्द था! अब थोड़ा आरम्भ भी हुआ है तो लोग उन असामयिक यज्ञों को करा रहे हैं जो भूत काल की किन्हीं परिस्थितियों में उपयोगी रहे होंगे पर आज उनसे परिस्थिति का मेल नहीं खाता। चंडी यज्ञ युद्ध की तैयारी के समय लोगों में जोश उभारने के लिए किये जाते थे, विष्णु यज्ञ भक्ति बढ़ाने के लिए, रुद्र यज्ञ वैराग्य बढ़ाने के लिए होते थे। आज तो कुमार्ग गामी दुर्बुद्धि ग्रस्त मानव जाति को सन्मार्ग पर चलने, सद्बुद्धि को अपनाने के लिए गायत्री यज्ञों की ही प्रधान तया आवश्यकता है।

सामूहिक गायत्री यज्ञ कैसे हो?

श्रेष्ठ परमार्थ है। सवा लक्ष या चौबीस लक्ष जप का एक महा अनुष्ठान सङ्कल्प करके उसके भागीदार बनाने के लिए सभी धार्मिक अभि रुचि के नर नारियों के पास जाना चाहिए और पूर्णाहुति का जो समय निर्धारित किया हो उतने दिन के लिए नित्य कुछ जप करने के लिए उन्हें तैयार करना चाहिए। जिस प्रकार घर घर जाकर चन्दा इकट्ठा किया जाता है, जिस प्रकार वोट मांगे जाते हैं, उसी प्रकार थोड़े दिन तक कुछ समय गायत्री जप के लिए लगाने को लोगों से कहा जाय तो कुछ न कुछ संख्या में ऐसे सज्जन निकल आते हैं, जिनकी सहायता से उतना जप सुगमता से पूरा हो सकता है।

प्रारम्भिक प्रयोग के रूप में ९ दिन में सवालक्ष सामूहिक 'यज्ञानुष्ठान' का आयोजन किया जा सकता है। प्रतिदिन १४० मालाएं इसमें करनी पड़ती हैं एक घण्टा प्रतिदिन समय देकर १० माला प्रतिदिन गायत्री जप करने वाले १४ श्रद्धावान नर नारी तलाश करने चाहिए। संभावित ३० व्यक्तियों की सूची जेबमें रखकर किसी अपने जैसे एकाध साथीको सङ्ग लेकर निकला जाय, लोगोंके यज्ञानुष्ठानका महत्व समझा कर ९ दिन तक एक घंटा रोज गायत्री जप करके भागीदार बनने के लिए कहा जाय, तो ३० में से १५-१६ अवश्य तैयार हो सकते हैं। इनके नाम कागज में नोट कर लीजिए या सङ्कल्प पत्र पर हस्ताक्षर करा लीजिए। दूसरे तीसरे दिन जा जा कर तलाश करते रहिए कि वे लोग प्रतिज्ञा पालन कर रहे हैं या नहीं। इनमें से एक दो ऐसे भी निकल सकते हैं जो वचन देकर भी उसे पूरा न करें उसका मार्जिन रखने के लिए एक दो व्यक्ति पहले से ही अधिक रखने चाहिए। इस प्रकार सवालक्ष जप ९ दिन में आसानी से पूरा हो जाता है। यों दो चार व्यक्ति भी लगकर बैठें तो इतनी संख्या पूरी कर सकते हैं पर इससे अधिक लोगों को सामूहिक साधना में लगाने का उद्देश्य पूरा न होगा। इसलिए भागीदारों की संख्या अधिक से अधिक बनानी चाहिए। भले ही वे कम समय दें। जहाँ जप करने वाले थोड़े हों वहाँ ९ दिन की अपेक्षा १५ या २१ दिन में सवालक्ष

भागीदारों की संख्या से संतुष्ट नहीं होना चाहिए वरन् अधिकों की ही तलाश करते रहनी चाहिए। निर्धारित संख्या से अधिक जप हो जाय तो इसमें बुराई कुछ नहीं अच्छाई ही है। प्रायः लड़कियाँ और महिलाएँ अधिक सहयोग देती हैं उन्हें पूरा प्रोत्साहन देना चाहिए। — १२ वर्ष से अधिक आयु के बच्चे जो शुद्ध गायत्री मन्त्र उच्चारण कर सकें, भाग ले सकते हैं। यज्ञोपवीत धारण किये हों तो उत्तम है अन्यथा बिना यज्ञोपवीत वाला जप न करे ऐसा कोई प्रतिबन्ध नहीं है। यों गायत्री माता सभी की है, मनुष्य मात्र ईश्वर के पुत्र हैं। जाति पाँति में ऊंच नीच का विषवृक्ष केवल पिछले तमसाच्छन्न काल में पनपा है। वह आज नहीं तो कल—समूल नष्ट तो होना ही है पर जब तक लोगों की संकीर्णता दूर नहीं हो जाती तब तक वहाँ की परिस्थिति के अनुसार उन जातियों के लोगों को ही सम्मिलित करना चाहिए जिसमें दूसरों को अधिक आपत्ति न हो। दूसरी बात यह भी ध्यान रखनी चाहिए कि बहुत अधिक रूढिवादी—पाखंडियों को पहले से ही सम्मिलित न किया जाय अन्यथा वे कभी ब्राह्मण वाद के नाम पर, कभी जाति वाद के नाम पर, कोई न कोई विघ्न उपस्थित किये बिना न मानेंगे। इन प्रेम आयोजनों में उदार प्रकृति के, विचार शील धर्म प्रेमी ही लिये जांय।

निर्धारित जप संख्या की व्यवस्था होते ही अन्तिम दिन सामूहिक हवन की तैयारी में लग जाना चाहिए। हवन के लिए प्रातः या सायङ्काल का ऐसा समय रखना चाहिए जो सब की सुविधा का हो। स्थान ऐसा चुना जाय जो नगर के निकट या बीच में हो, जहाँ पहुँचने में जनता को अड़चन न हो। यज्ञ मंडप एवं वेदी या कुण्ड को सजाने में अपनी कला कारिता का पूरा पूरा परिचय देना चाहिए। बांस, बल्ली, रङ्गीन कपड़े, चित्र, आदर्श वाक्य, ध्वजा पताका, फूल, गुलदस्ते, रङ्गीन फल, वंदनवार, केले के पत्ते खंभे आदि वस्तुओं की सहायता से कुछ सुरुचि पूर्ण कलाकार मनोवृत्ति में लोग मिल कर सजावट करने में एक दो दिन का पूरा पूरा समय

करें। लोगों में उत्साह एवं आकर्षण पैदा करने के लिए यज्ञ शाला की सजावट पर पूरा पूरा ध्यान दिया जाना चाहिए। कुरुचि पूर्ण, मैली कुचैली गंदी फूहड़ चीजों में बनी हुई अस्त व्यस्त यज्ञ शाला-यज्ञ संयोजकों की अयोग्यता ही साबित नहीं करती वरन् लोगों का उत्साह भी ठंडा कर देती है, इसलिए इस कार्य में उपेक्षा बरतना किसी भी प्रकार उचित न होगा। जिस स्थान पर यज्ञ हो वहां की दीवारों को गेरू आदि से सुरुचि पूर्ण आदर्श वाक्य में लिख कर सुसज्जित कर दिया जाय। आगन्तुकों के बैठने की समुचित व्यवस्था हो।

समिधाऐं सूखी, कुण्ड या वेदी के साइज की, बिना सड़ी घुनी हों। प्रधान वेदी पर एक कलश तो आवश्यक ही है। चारों कोनों पर चार कलशों की स्थापना और भी हो सके तो उत्तम है। कलश रंगे हुए, पंच पल्लव, नारियल, कलावा, पुष्प माला आदि से सजे हुए हों। पञ्च पात्र, चमची, आसन, हवन समिग्री की थाली, घृत पात्र, स्रुवा, पूजा की थाली, घृत दीपक आदि सभी वस्तुऐं, पहले से ही तैयार रखनी चाहिए। ताकि समय पर उनके लिए भाग दौड़ करने की अड़चन खड़ी न हो। हवन सामिग्री, घी, समिधा, सजावट प्रसाद वितरण आदि के लिए कुछ चंदा इन जप करने वाले वाले भागीदारों से या अन्य लोगों से इकट्ठा कर लेना चाहिए। यज्ञ संयोजक यदि ग्रहस्थ हैं तो उन्हें इसमें अपना भाग दूसरों से अधिक देना चाहिए। हवन सामिग्री में सुगन्धित द्रव्यों का होना आवश्यक है। विधि पूर्वक उचित अनुपात से शास्त्रोक्त औषधियां हवन में उपयोग करने से यज्ञ में सम्मिलित होने वालों के स्वास्थ्य एवं मस्तिष्क पर कीमती दवाओं जैसा काम करती हैं। इसलिए आहुतियों में शुद्ध घी तथा सुगन्धित औषधि सामिग्री की सुव्यवस्था करना उचित है। पर जहाँ पैसे की बहुत तंगी हो वहाँ शुद्ध दूध की-मेवा, शकर घी पड़ी हुई खीर, हलुआ आदि पौष्टिक खाद्य पदार्थों का हवन करना चाहिए। सुगन्धित सामिग्री एवं खीर आदि मिला कर भी तिल, जौ, चावल, सूखे अन्नों में थोड़ा घी शकर मिला कर भी काम चल सकता है। पर यह सूखे अन्नों का हवन यज्ञ कर्ताओं की कंगाली का ही सूचक है। ऐसा तो वे पण्डित लोग कराते हैं जो यज्ञ में एकत्रित निधि को दक्षिणा में, पुजापे में, अपने लिए हड़पने के लिए आहुतियों का झंझट सस्ते से सस्ते में निपटाना चाहते हैं। तिल, जौ, चावल थोड़ी मात्रा में सम्मिलित हों पर अधिकांश में सुगन्धित औषधियों एवं घी खीर हलुआ आदि पौष्टिक एवं शाकल्यों की ही प्रधानता रहे। खीर आदि गलती चीजें चमची से हवन करने में सुविधा रहती है।

स्नान करके, शुद्ध वस्त्र पहन कर हवन करने वाले आवें, पैर धोकर यज्ञ शाला में घुसें, कन्धे पर पीले दुपट्टे हों, सब होताओं के मस्तक पर चन्दन लगाया जाय। जप करने वाले भागीदारों के कुटुम्बी या अन्य सज्जन जो हवन में भाग लेने के इच्छुक हों उन्हें भी अवसर दिया जाय। बहुत छोटे बच्चों को छोड़ कर शुद्धता पूर्वक आये हुए किसी इच्छुक को हवन में शामिल होने से रोका न जाय। यह सब बातें घर-घर जाकर पहले ही समझाई जाँय और हवन में भाग लेने के लिये लोगों को आमन्त्रित किया जाय तो बहुत लोग आ सकते हैं। यह आध्यात्मिक लाभ अधिकतम लोगों को मिले इस दृष्टि से समीप-वर्ती क्षेत्र में समझाने, प्रेरणा देने, सूचना करने बुलाने के लिये कई कई बार लोगों के घरों पर जाना चाहिए इस भाग दौड़कर लोगोंसे सत्कर्म करालेने की 'धर्म फेरी' को संसार का सबसे बड़ा पुण्य कहा जा सकता है। जो यज्ञ संयोजक जितनी धर्म फेरी लगा सकेगा उसका आयोजन उतना ही सफल होगा। जो धर्म फेरी में अपनी तौहीन, बेइज्जती समझेंगे संकोच करेंगे उनका आयोजन फीका एवं असफल रहेगा। इसलिए यज्ञ संयोजकों में से कुछ की तो ड्यूटी ही धर्म फेरी की लगा देनी चाहिए। इनका कार्य लोगों से बार बार प्रार्थना करके इस सन्मार्ग में लाना हो, जो इस मार्ग में मिले अपमान को भी

सकती है। मेम्बरों के लिए जिस प्रकार वोट माँगी जाती है, ठीक उसी प्रकार गायत्री माता तथा यज्ञ भगवान को मेम्बर बनाने के लिए यज्ञ संयोजकों को दर दर जाकर अलख जगाना चाहिए।

"संक्षिप्त हवन विधि" पुस्तक में गायत्री हवन का पूरा विधान बड़ी सरल रीति से लिखा हुआ है। हवन के लिए जितने आसन बिछाये गये हों उन पर एक एक पुस्तक भी रखी जाय। ताकि मन्त्र बोलने में सभी को सुविधा हो। एक व्यक्ति पथ प्रदर्शक हो, वह आदेश देकर होताओं से सब कृत्य कराता जाय आदेश देता जाय, मन्त्र बुलवाता जाय। कई पण्डित कई पुस्तकों से कई विधान बनाते हैं, वह ठीक नहीं। अ० भा० गायत्री संस्था की ओर से अत्यन्त उच्च-कोटि के कर्मकाण्डी याज्ञिक विद्वानों की सम्मति से एक सुनिश्चित पद्धति बन गई है, उसे हटा कर अन्य अस्त व्यस्त रीतियाँ अपनाना ठीक नहीं। जो भी सज्जन हवन कराने वाले हों उन्हें पहले से ही नियत यज्ञ पद्धति की समुचित जानकारी होनी चाहिए। सब के हाथ में पुस्तकें रहने से यथाक्रम निर्धारित विधि विधान के साथ हवन क्रम चलाना चाहिए।

सवालक्ष सामूहिक जप के लिए शतांश आहुतियाँ १२५० दी जाती हैं। टोली बदल बदल कर सभी को हवन करने का अवसर मिले इस दृष्टि से उपस्थित व्यक्तियों की संख्या, आहुतियों और यज्ञशाला में बैठनेका स्थानको देखते हुए यह निश्चय करना चाहिये कि कितनी आहुतियाँ दे देकर होताओं की कितनी टोलियाँ बदली जांय मान लीजिये यज्ञकुंड पर आठ व्यक्ति बैठते हैं। कुल व्यक्ति ४० हैं, आहुतियाँ १२५० देनी हैं तो आठ आठ की ५ टोलियाँ बदलेंगी प्रत्येक टोली को २५० आहुतियाँ देनी हैं। होता ८ हैं, तो प्रत्येक व्यक्ति को ३१ आहुति देने का अवसर मिलेगा। ३०-३२ आहुतियाँ देकर आठ आदमियों की ५ टोली बदलें तो १२५० आहुतियाँ हो जायगी। इसमें कुल मिला कर दो ढाई घण्टा समय लगेगा। पूर्णाहुति, वसोधारा, साष्टांग प्रणाम, क्षमा याचना, शुभकामना, आरती, घृत अवघ्राण, भस्मधारण, परिक्रमा आदि सभी कार्य मिल जुल कर करने से यज्ञ का अन्त बड़ा शोभायमान हो जाता है। अन्त में कीर्तन, भजन एवं प्रवचन की भी कुछ व्यवस्था अवश्य रखी जाय। प्रसाद बाँटने में मिठाई आदि का बहुत खर्च नहीं बढ़ाना चाहिये। यज्ञ में बना हुआ, खीर हलुआ, पञ्चामृत, मामूली मिठाई,ठण्डाई आदि वस्तुऐं इस कार्य के लिये पर्याप्त हैं।

यज्ञ के अन्त में ब्रह्मभोज का विधान है। इसके लिये केवल सत्पात्र ही उपयुक्त हो सकते हैं। सच्चे ब्रह्म परायण, निर्लोभी, अपरिग्रही, परम संतोषी, निर्व्यसनी, सदाचारी, लोकसेवी, धर्म प्रचारक ब्राह्मणों का मिलना आज दुर्लभ हो रहा है। भारी खोज करने पर ब्राह्मणत्व की कसौटी पर खरे उतरने वाले सत्पात्र ब्राह्मण कहीं सौभाग्यसेही एकदोही मिल सकते हैं। जिन भाग्य शालियों को ऐसे कोई ब्राह्मण, साधु सन्त उपलब्ध हो सकें वे अवश्य उन्हें समुचित सत्कार के साथ भोजन करावें। जहाँ केवल नामधारी गुण कर्म स्वभाव से रहित ब्राह्मण हों वहाँ कुमारी कन्याओं को भोजन करा देना चाहिये। और नारी जाति की महानता की प्रतीक, गायत्री माता की प्रतिनिधि, इन कन्याओं का समुचित स्वागत सत्कार तिलक चन्दन, पुष्पमाला, चरण स्पर्श आदि के द्वारा सत्कार भी करना चाहिये।

ब्रह्मदान, ब्रह्मभोज का अत्यन्त उत्कृष्ट स्वरूप है। कुछ सस्ता गायत्री साहित्य उपस्थित जनता में अवश्य ही वितरण करना चाहिये। अन्नदान से ज्ञान दान का पुण्य सौगुना अधिक माना गया है पूरी मिठाई खाकर मनुष्य कुछ ही देर में उसे टट्टी के मार्ग से निकाल देता है और फिर भूखा का भूखा हो जाता है। यदि वह खाने वाला कुपात्र हुआ तो उस अन्न से जो शक्ति उसे मिली और उसके द्वारा वह जो अधिक दुष्कर्म करने लगा तो उसको अन्नदान का पुण्य मिलना तो दूर–उलटा उस दाता को पाप में सहायक बनने का पाप लगेगा। इसी प्रकार यदि दी हुई दक्षिणा के धन का उपयोग सिगरेट, भांग, गांजा, शराब आदि नशे बाजी में हुआ है तो भी वह दान दाता को उलटे नरक में ले जायगा। इन सब दोषों से ब्रह्मदान–ज्ञानदान - सर्वथा मुक्त है। अच्छी

पुस्तक को जो पढ़ेगा उसे ज्ञान ही मिलेगा। उस ज्ञान से दुष्कर्म नहीं सत्कर्म ही बनना सम्भव है। फिर वह पुस्तक देर तक रहने वाली भी है, उस व्यक्ति को या उसके घर वालों को जब तक वह बेचारी जीवित रहेगी अच्छी प्रेरणा ही देती रहेगी।

ब्रह्मदान के लिए गायत्री चालीसा बहुत उत्तम है। २४० चालीसा वितरण किये जांय और यदि लेने वाले केवल एकबारही पढ़कर उसे फेंक दें तो भी २४० पाठों का एक अनुष्ठान करा देने का पुण्य उस दाता को मिल जाता है। यदि कहीं उनमें से आधे चौथाई भी रोज पूरे पांच पाठ नित्य करने लग गये तो नित्य अनुष्ठान होते रहने की एक शृंखला चिर-काल तक चला देने का एक महान पुण्य हो जाता है। इतने बड़े पुण्य फल के लिए ६) जैसी छोटी रकम खर्च करना बहुत ही सरल है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए १५) मूल्य के २४० चालीसा डाक खर्च समेत केवल मात्र ६) में देने की गायत्री तपोभूमि ने विशेष व्यवस्था करदी है।

उपरोक्त विधि व्यवस्था के आधार पर एक सवालक्ष का सामूहिक अनुष्ठान बड़ी आसानी से बहुत थोड़े खर्च में हो सकता है। इसमें कार्य-कर्ताओं का उत्साह और भाग दौड़ में तत्परता ही प्रधान कार्य है। आयोजन जितना महत्व पूर्ण और प्रभावशाली बन जाता है उसे देखते हुए जो खर्च पड़ता है वह नगण्य ही है। साधारण तया इस पूरे कार्यक्रम में ५० से १०० रुपये के भीतर काम चल जाता है। कहीं कहीं तो इससे भी कम में व्यवस्था बन जाती है।

पहले हर जगह छोटे ९ दिन के आयोजन कराने चाहिए। उसमें अनुभव प्राप्त करके २४ लक्ष का यज्ञानुष्ठान आयोजित करना चाहिए। २४ लक्ष महा अनुष्ठान का जप १ महीने तक एक घंटा रोज जप करने वाले ८० व्यक्ति मिल कर पूरा कर सकते हैं। जप करने वालों की संख्या कम हो तो प्रतिदिन का कुछ समय बढ़ाया जा सकता है या एक महीने की अवधि को दो तीन महीने की किया जा सकता है। इसमें २४ हजार आहुतियों का हवन होता है, जो ५ कुण्डों की यज्ञशाला बनाकर प्रतिदिन ३-४ घंटे रोजके आयोजनमें ३दिनमें पूरा हो जाता है। यों एक कुण्ड में भी सूर्योदय से सूर्य अस्त तक आहुतियां ८ आदमी देते रहें तो एक दिन में भी २४ हजार हवन हो सकता है। पर ऐसी व्यस्तता की अपेक्षा तीन दिन का प्रेम पूर्वक आयोजन जिसमें भजन, कीर्तन, प्रवचन, चालीसा पाठ आदि कई आयोजन सम्मिलत हों, ठीक है। इनमें २००) से लेकर ५००) तक व्यय हो सकता है। अक्सर लोग बड़ी बड़ी दावतें खिलाने और लम्बी चौड़ी दक्षिणाऐं देने में हजारों रुपया फूंक देतेहैं यह अनावश्यक है। विवाह शादियों की तरह यज्ञों में दावतें उड़ें यह धन का अपव्यय है। बाहर से आये हुए अतिथियों के लिए भोजन की व्यवस्था उचित है, पर वह भी सीधी सादी, यज्ञीय पवित्रता से मेल रखती हुई सतोगुणी होनी चाहिए। ९ कुण्डों की यज्ञशाला में ३ दिन में सवालक्ष आहुतियों का हवन हो सकता है। इसमें हवन सामिग्री का दो सौ रुपया खर्चा अधिक बढ़ेगा।

२५ कुण्डों की यज्ञशाला में ३ दिन में ५ लाख आहुति हो सकती है। इसमें दो हजार के करीब खर्च चाहिए। १०० हवन कुण्डों में ३ दिन में २४ लक्ष आहुति होती है। इन में व्यवस्था बड़ी बन जाती है। इसमें न्यून तम ५ हजार और अधिक तक १० हजार खर्च होता है।

आइए, गायत्री माता के अन्तराल में सन्निहित सामूहिकता भावना को उपासनाकी क्षेत्र में भी विक-सित करें। इसके लिये स्थान २ पर सामूहिक यज्ञानु-ष्ठानों की आवश्यकता है। एक छोटा बड़ा आयोजन आप भी कीजिये। ऐसे शुभ सङ्कल्प माता की सहा-यता से सदा सफल ही होते हैं। आपकी अन्तरात्मा यदि इसके लिये प्रेरणा करे तो संकोच मत कीजिये-कदम आगे बढ़ा दीजिये। जिस माता ने आपको प्रेरणा दी वे ही सफल बनाने का मार्ग निकालदेंगी। प्रयत्न कर्ता को श्रेय प्राप्त होता है। आप भी एक ऐसा प्रयत्न करने के लिए अग्रसर हूजिये और माता की हार्दिक इच्छा पूर्ण करने वाले उसके सच्चे पुत्र बनने का श्रेय सौभाग्य प्राप्त कीजिये।

गायत्री उपासना के अनुभव

लकवा ठीक हुआ

श्री मन्नूलाल तिवारी, पिछोर झांसी से लिखते हैं-- मुझ पर सन् ५५ में अचानक एक लकवा जैसे भयंकर रोग का आक्रमण हुआ। मुंह दांत सभी बंद हो गये, शरीर पत्थर की तरह अकड़ गया। सिविल सर्जन ने जवाब दे दिया। असह्य पीड़ा से छटपटाता हुआ मैं जीवन की अन्तिम घड़ियां गिन रहा था। पल पल पर बेहोशी के दौरे आते थे। इसी बीच गायत्री माता का स्मरण किया। आर्त पुकार मचाई। माता ने ग्राह के मुंह में फंसे हुए गज की तरह मुझे बचा लिया। जल मंदिर शिवपुरी की श्री बाई जी महाराज ने मेरी बड़ी सहायता की। धीरे धीरे अच्छा होने लगा और कुछ ही दिनों में पूर्ण स्वस्थ होगया। तब से अब तक अनन्य श्रद्धा से गायत्री उपासना में लगा हूँ। १६ अनुष्ठान कर चुका ५ बार गायत्री तपोभूमि में माता के दर्शन कर आया।

असह्य पीड़ा दूर हुई

श्री प्रहलाद जोशी अध्यापक, तनोडिया से लिखते हैं— मैं कई मास से शारीरिक पीड़ा से संत्रस्त था। पैर का खून जम गया था, कष्ट के मारे मृत्यु की इच्छा होती थी। एक दिन गायत्री यज्ञ की अन्तः प्रेरणा हुई। दूसरे दिन यज्ञ कराया, तीसरे ही दिन आश्चर्यजनक रूप से पीड़ा घटनी आरंभ हुई और एक हफ्ते के अन्दर पर बिलकुल ठीक हो गया।

ड्राइवर मरगया पर मैं बच रहा

अतर्रा (बांदा) से श्री रामसिंहजी लिखते हैं मैं मोटर ठेला से इलाहाबाद होता हुआ कानपुर से अतर्रा आ रहा था। दुर्भाग्य से अतर्रा से २८ मील पर हमारा मोटर ठेला उलट गया। ठेले में १७० मन वजन भरा था। मोटर उलटने से ड्राइवर तो ५ मिनट के अन्दर मर गया। दूसरे आदमी का पैर टूट गया। मुझे गायत्री माता ने बचाया। सिर में मामूली चोट आई। एक ही जगह बैठे हुए लोगों में से मेरा इस प्रकार बच जाना माता का अनुग्रह ही है।

पारिवारिक अशान्ति दूर हुई

श्री सुन्दरलाल नाग, बिरमुडो (रायपुर) से लिखते हैं— मैं बहुत समय से गृह जंजाल में बड़ा शोकातुर था। गृहिणी बड़ी कर्कशा कटुवादिनी. लड़ाकू थी। जबसे मैंने गायत्री उपासना आरंभ की है, घर में बड़ी शान्ति रहने लगी है। आर्थिक समस्या भी हल हुई है। अभी अभी डेढ़ हजार रुपये में ५ एकड़ जमीन खरीदी है। नित्य १० माला जपने के अतिरिक्त दोनों नवरात्रियों में अनुष्ठान भी करता हूँ।

गृहस्थ सुख में वृद्धि

श्री महावीरप्रसाद शर्मा नान्ता (कोटा) से लिखते हैं— एक बार मेरे बाला (नारू) फोड़ा हुआ और पीलिया रोग के चंगुल में फँस गया। इन विपत्तियों को मैंने गायत्री माता की शरण लेकर पार किया। धर्मपत्नी से मनोमालिन्य का जो क्लेश रहता था वह भी शान्त हुआ। माता की कृपा से एक सुन्दर पुत्र उत्पन्न हुआ है। आर्थिक स्थिति भी सुधरी है।

परीक्षा में उत्तीर्ण

श्री जगतराम पस्तोरे गनेशगंज (टीकमगढ़) से लिखते हैं— मेरे जीवन का पिछला समय ऐसे वातावरण में व्यतीत हुआ है जहां नास्तिकता की ही प्रधानता थी। पूजा पाठ को ढोंग और बेवकूफ माना जाता था। पिछली बार परीक्षा में अनुत्तीर्ण रहा तो मेरे मित्र पं० छेदीलाल शर्मा ने बुद्धि वृद्धि एवं सांसारिक सुख शान्ति के लिए अचूक उपाय गाय-

मंत्र बताया। विश्वास तो न होता था पर परीक्षा के रूप में नवरात्रि में एक अनुष्ठान, माला के अभाव में १०८ कंकड़ गिन गिन कर पूरा किया। परीक्षा में पास हुआ, उसी वर्ष ट्रेनिंग में भी नाम आगया। अच्छे नम्बरों से उत्तीर्ण होकर आज अच्छे ग्रेड पर अध्यापन कार्य कर रहा हूं। साथ ही गायत्री उपासना का क्रम भी चलता है।

डाकू कुछ बिगाड़ न सके

श्री कृष्णराम हरिभाऊ घोन्डे, वापी। (गुजरात) से लिखते हैं— हम लोग वापी से ३० मील दूर घने जंगल में एक आवश्यक काम के लिए बैलगाड़ी में जा रहे थे। रात अंधेरी थी, जंगल बहुत घना था। इस सुनसान में डाकुओं ने हमें घेरा और गाड़ी रोकली, हमारे पास कुछ धन भी था। बहुत घबराहट हुई। अन्त में माता का नाम लेकर गाड़ी के बैलों को जोर से भगाया, उन कमजोर बैलों में न जाने कहां से इतनी ताकत आई कि इशारा देते ही घुड़ दौड़ भागने लगे। डाकू बराबर दो मील तक पीछा करते रहे पर पकड़ न सके। अन्त में पुलिस स्टेशन आगया, वहां आकर हम लोगों ने शरण ली और जान बचाई। माता जिसकी रक्षा करती है उसे कौन मार सकता है।

दुश्चरित्रता में सुधार हुआ

श्री रामसिंह जी बिछियांवा (इलाहाबाद) से लिखते हैं— मेरे एक मित्र के आचरण कुसंग के कारण बहुत बिगड़ गये थे। वेश्या गमन, नशेबाजी जुआ आदि से उसने घर का सब पैसा फूंक दिया, स्त्री के जेवर तक बेच दिये। उसके पिता तथा घर के सब लोग बहुत दुखी थे। चूंकि बचपन से ही उससे मेरी मित्रता थी, इस लिये उसके सुधार का संकल्प लेकर मैंने गायत्री उपासना की। उसका बड़ा अच्छा परिणाम हुआ थोड़े ही दिन में उसके सब दुर्गुण दूर हो गये। घर के सब लोग संतुष्ट हैं। अब वह मित्र भी गायत्री उपासक बन गया है।

आपत्तियां टलीं

श्री सुरेन्द्रनाथ द्विवेदी कोट पूतली से लिखते हैं। गत वर्ष परीक्षा में फेल होगया, सारे सर्टिफिकेट तथा सारे सामान और रुपयों समेत बक्स चोरी चला गया, नौकरी के लिए सर्वत्र मारा मारा फिरा पर कहीं सफलता न मिली। इन परेशानियों से घबरा कर मैंने गायत्री अनुष्ठान आरम्भ किया। जप पूरा होते ही एक छोटी नौकरी मिल गई, श्रद्धा बढ़ी, सवालक्ष अनुष्ठान किया। अब मुझे साइन्स अध्यापक की अच्छी जगह मिल गई है। आगे अधिक उन्नति होने की आशा है।

बिजली गिरी किन्तु सब बच गये

श्री गंगाप्रसादसिंह जी बरिया घाट (मिर्जापुर) से लिखते हैं— ता० ६ सितम्बर ५४ को दिन के ३॥ बजे वर्षा हो रही थी, घर में सब भाई भतीजे चार पाई पर बैठे थे। अचानक घर पर आकाश से भयंकर गड़गड़ाहट के साथ बिजली गिरी। औरतें जोर से रोने लगीं मेरे मुंह से भी गायत्री माता की पुकार निकली। बिजली गिरने से छप्पर की खपड़ैल टूट गई घर में धुआँ भर गया, बारूद की सी तेज गंध आरही थी, दीवाल व नीचे की जमीन जहां लड़के बैठे थे बुरी तरह फट गई, मकान से सटा हुआ नीम का पेड़ जल गया! इतना सब होते हुए भी घर के किसी व्यक्ति को कोई क्षति न पहुँची। जहां सब लोग बैठे थे, ठीक उनके नीचे की जमीन का बिजली के भयंकर प्रहार से फटना और किसी का बाल भी बांका न होना सभी दर्शकों के लिए एक आश्चर्य की बात थी। तब से हम लोगों की गायत्रीमाता पर अनेक गुनी श्रद्धा बढ़ गई है।

अनेकों आपत्तियां टलीं

श्री दुर्गालालजी रिटायर्ड मजिस्ट्रेट बूँदी से लिखते हैं— गायत्री उपासना से मेरी अनेकों उलझनें दूर हुई हैं। पेन्शन मिलने में बड़ी कठिनाइयां थीं वे हल हुईं। ज्येष्ठ पुत्र की आजीविका संबंधी समस्या सुलझी। कन्या के प्रसव काल से जो प्राण घातक संकट उपस्थित था वह टला। पौत्री की अत्यंत भयंकर ज्वर एवं मूर्छा से जीवन रक्षा हुई। इस

प्रकार मैंने अपने जीवन में गायत्री मंत्र के प्रयोग द्वारा अनेक चमत्कारी लाभ होते देखे हैं।

छूटी हुई नौकरी फिर मिली

श्री सीताराम काशीनाथ राठी, बोरीबली (बम्बई) से लिखते हैं-- सन ५४ दिसम्बर में मुझे लकवा मार गया इलाज की हद करदी गई पर लाभ कुछ न हुआ। एक मित्र के परामर्श से मैंने मानसिक गायत्री उपासना आरम्भ की। प्राकृतिक चिकित्सा का सहारा लिया, धीरे धीरे स्वास्थ्य सुधरने लगा। बम्बई प्लास्टिक लि० में नौकरी करता था वह भी अस्वस्थता के कारण छूट चुकी थी वास्थ्य सुधरा तो पैसे की तंगी की विपत्ति सामने आई। छूटी नौकरी को पुनः प्राप्त करने की कोशिश की तो मना का, दो टूक जबाव मिल गया। सब ओर से निराश होकर सवालक्ष गायत्री अनुष्ठान पर बैठा। अनुष्ठान पूरा होने में दो दिन की देर थी कि कम्पनी का घर बैठे बुलावा आया और फिर काम पर लग गया। गुजर होने लगी। पहले मेरी स्त्री और बालक बार बार बीमार पड़ते थे सो भी अब नहीं पड़ते। माता की दया से अब आनंद ही आनन्द हैं।

सर्प विष उतरा

श्री वेणी प्रसादजी ट्रालिमैन, चिचौड़ा (बैतूल) गायत्री मन्त्र शक्ति के बारे में लिखते हैं— मैं एक दिन निमौटी गांव आ रहा था। रास्ते में वर्धा नदी के किनारे साँप के डसने से एक गाय छटपटा रही थी। बहुत लोग अनेक उपचार कर रहे थे, पर कोई लाभ नजर नहीं आता था। मैं गायत्री जपता तो था, पर उसका प्रयोग कभी नहीं किया। उस समय अन्तर से प्रेरणा पाकर मैंने थोड़ा सा जल मंगा कर गायत्री मंत्र से अभिमंत्रित कर गाय को पिला दिया शेष उसके शरीर पर छिड़क दिया। जल छिड़कते ही गाय एक दम उठ कर खड़ी हो गयी फिर अभिमंत्रित जल पिलाने पर वह चरने लग गयी। इस मन्त्र शक्ति को देख मेरे सहित सभी लोग चकित हो रहे थे।

रेल से कटने से बचा

श्री जे० सा० गवली, थाना (बम्बई) माता की कृपा का वर्णन करते हैं— नौकरी से घर वापिस आ रहा था। स्टेशन पहुंच कर चलती ट्रेन पकड़ने की कोशिश की। हैंण्डल पकड़ कर पांव दान पर खड़ा ही हुआ था कि मेरे हाथ से हैंण्डल छूट गया और मैं गाड़ी के नीचे लुढ़क गया। पर पता नहीं कैसे मेरे गिरते ही गाड़ी सहसा रुक गयी और मैं थोड़ी सी चोट मात्र खाकर बाल बाल बच गया। लोग मेरे भाग्य की सराहना कर रहे थे और मैं प्राण रक्षिका अपनी इष्ट देवी गायत्री माता की याद में आँसू बहा रहा था।

मरते मरते बचा

श्री रामकिसन बडाले, माले गांव (नासिक) लिखते हैं— गणेश उत्सव की तैयारी में मैं सीन बनाने में लगा हुआ था। एक बिजली का तार वहाँ नीचे लगा हुआ था। अचानक मेरे हाथ का पंजा उस तार पर जा पड़ा और चिपक गया। बिजली का करण्ट मेरे सारे शरीर में फैल गया और मेरे प्राणों को खींचने लगा। मेरे बड़े भाई और मित्र गण भी वहीं थे, पर कुछ कर नहीं सके। मेरा प्राण जाने ही वाला था— मैंने माता की व्याकुलता से याद किया। बोलने की सामर्थ्य थी ही नहीं! याद करते ही जिस होल्डर में से वह वायर आया हुआ था, वह होल्डर टूट कर नीचे गिर पड़ा और मेरे प्राण बच गये। ठीक उसी क्षण में होल्डर का गिर पड़ना माता की साक्षात् कृपा नहीं तो क्या है?

आवश्यकता की पूर्ति

श्री शिव शंकर मिश्र, कामठी, माता की छिपी सी कृपा का वर्णन करते हैं— मेरी लड़की की सगाई स्थिर हो गयी थी, पर उसके खर्च का उपाय नहीं हो रहा था। कर्ज मांगने पर कर्ज भी नहीं मिल सका। मैं व्याकुल भाव से माता की प्रार्थना करता रहता। अब आठ ही दिन विवाह के शेष थे। मेरी व्याकुल प्रार्थना भी बढ़ रही थी। अन्तः प्रेरणा से

पुनः महाजन से कर्ज मांगने गया। इस बार उसने बिना हिचक के ५०० रु० का सामान तथा २००)रु० नगद दे दिया फिर भी कमी रही। माता से प्रार्थना चलती रही। जब दो दिन शेष रह तो अनायास ही १८००) रु० का भी प्रबन्ध हो गया। मैंने माता को धन्यवाद देते हुए विवाह सम्पन्न किया।

बालक कुचल जाने से बचा

श्री भागीरथ जी हरदिया, कसरावद अपने अनुभव की घटना लिखते हैं—मेरे यहाँ भाई एवं बहन की शादी थी। मैं अपने दो साथियों के संग पानी की कोठी भरने के लिये कुँए पर जा रहा था साथ में मेरी बुआ का आठ वर्ष का लड़का भी था। एक पत्थर पर गाड़ी के चढ़ जाने के कारण वह आठ सात मन भारी कोठी उस बालक पर गिर पड़ी और बालक गिर कर चक्के के नीचे आ गया। उसके पेट पर से चक्का निकल गया। लड़के को वमन होने लगा और छटपटा कर कराहने लगा। मैं व्याकुल होकर माता की प्रार्थना कर रहा था। तुरंत बालक को डाक्टर के यहां लेकर गया। डाक्टर ने भली भाँति जाँच कर कहा— लड़का अब पूरा स्वस्थ है। सभी आश्चर्य में थे कि इतनी भारी गाड़ी का भार सह कर वह कैसे पूरा स्वस्थ रह सका! मैं विवाह अवसर पर इस महाविघ्न से बचा लेने के लिये माता को धन्यवाद दे रहा था।

बारूद विस्फोट में भी सुरक्षा

श्री नन्दकिशोर तिवारी, धवाली (सागर) लिखते हैं,—तपोभूमि के महायज्ञ की पूर्णाहुति करके घर लौटा जा रहा था। मेरे गुरुवर गायत्री के परम-उपासक श्री परमानन्द मिश्र जी साथ ही थे। बीना-स्टेशन पर उतर कर वे प्लेटफार्म पर बैठ कर सन्ध्या करने लगे,—मैं उसी जगह खड़ा रहा। उसी समय एक ठेला पर चार बारूद की पेटी ट्रेन से उतार कर कुली लिये आ रहा था। सहसा एक पेटी फूट गयी और स्टेशन में आग लग गयी। गुरुदेव के बिलकुल निकट ही छः व्यक्ति अत्यधिक जल गये जिन में तीन अस्पताल जाकर मर गये। मेरा सारा वस्त्र और शिखा तक जल गये—शरीर में दो जगह थोड़े-थोड़े जलने के निशान बन गये, पर मेरे गुरुदेव को जरा सी आँच भी न आयी। उनके निकट के अन्य सभी काफी जल गये। मैं खड़ा होकर माता की संरक्षण-लीला आँखें फाड़कर देख रहा था।

माता ने जान बचाली

श्री भगवान सिंह (एकलवारा) मनावर, (धार), अपना अनुभव लिखते हैं—मैंने अब तक करीब साढ़े पन्द्रह लाख गायत्री मन्त्र का जप किया है। इससे मैं दानव से मानव, दरिद्रता तथा डाय-बिटीज की बीमारी मुक्त हुआ हूं। ३० अक्टूबर, १६५६ को मैं अपने मकान के ऊपरी छत पर बैठ कर भोजन कर रहा था। अचानक मकान के नीचे का खम्भा टूट जाने से सारा मकान ही गिर गया। मैं भी उसके साथ ही ऊपर से नीचे गिरा। दीवारें गिरीं, चाँदनी के पतरे गिरे, पाट-खपड़े आदि सब ही मेरे ऊपर गिरे, पर न तो मुझे कुछ चोट आई, और न कुछ लगा ही। गाँव के लोग दौड़े आये और सुरक्षित देखकर सभी गायत्री माता का जय-जय कार करने लगे।

सुहाग की रक्षा

श्री फूलवती शर्मा देहरादून से लिखती हैं,—मेरे मन में अनायास ही गायत्री उपासना के प्रति प्रेम उत्पन्न हुआ था और नित्य प्रेम से माता की आरा-धना किया करती थी। एक बार मेरे पतिदेव एक ऊँचे पहाड़ पर गये थे चढ़ने का रास्ता संकीर्ण और खतरों से भरा था। संभल-संभल कर पग रखना पड़ता था; पर पता नहीं क्या होनहार था। सारी सावधानता के बरतते हुए भी आखिर इनके पैर फिसल ही गये। मीलों की ऊँचाई थी। शरीर को चकना चूर हो जाने के सिवाय और कोई बात नहीं हो सकती थी, पर माता को अपनी बेटी का सौभाग्य-सिन्दूर जो बचाना था। थोड़ी दूर तक गिरने पर वे बीच में ही अटक गये, जैसे किसी ने उन्हें अपनी

गोद में ले लिया हो। केवल हाथ में थोड़ी चोट आयी, सुरक्षित होकर आकर मुझ से मिले। उस माता के चरणों में हजार-हजार न्यौछावर हूँ।

रक्तपित्त-रोग अच्छा हुआ

श्री नन्हकू मिश्र वीहट मुंगेर से गायत्री उपासना से हुए लाभ के बारे में लिखते हैं,—एक बार रात को मेरी छाती में जोरों से दर्द पैदा हुआ। मैं छटपटा करने लगा। दवा खाने से जरा भी पीड़ा कम न हुई। कुछ देर बाद खून की कै हुई और मैं बेहोश हो गया। फिर विविध औषधी उपचार होने लगे। समय बीतता गया और प्रतिदिन दर्द तथा रक्त-वमन की मात्रा बढ़ती ही गयी। मैं जीवन से निराश हो कर मन ही मन गायत्री जपने लगा। रात में माता का स्वप्न में दर्शन हुआ। प्रातः गायत्री जप का संकल्प देकर स्वयं भी पड़े-पड़े जप करता रहता। अब मैं दिनों दिन रोग की घटती एवं सुधार की अवस्था बढ़ती हुई देखने लगा। दो मास में मैं स्वस्थ हो गया। अब कृतज्ञ भाव से यथा साध्य नित्य जप किया करता हूं।

दुष्ट रोग से छुटकारा

श्री रामराज पाण्डेय, जमशेदपुर (सिंहभूमि) माता की कृपा का वर्णन करते हुए लिखते हैं.—मैं धातु रोग से जर्जर होगया था। सब तरह का इलाज कर हार चुका था। एक हितैषी मित्र ने मुझे गायत्री माता का अञ्चल पकड़ने की सलाह दी। उपासना विधि गुरुदेव से शिक्षा ग्रहण कर प्रारम्भ की। काफी सुधार हुआ। फिर टायफैड हुआ। उससे भी रक्षा हुई। अन्तिम कर्म भोग रूप में सारे शरीर में भयंकर दर्द शुरू हुआ। रात दिन मेरी चीख से आकाश फटता रहता। एक दिन रात में दर्द इतना बढ़ गया कि मैंने समझ लिया कि आज मेरे जीवन की अन्तिम रात्रि है। भोर में थोड़ी देर नींद आयी। स्वप्न में गुरुदेव आश्वासन दे रहे थे—अच्छे हो जाओगे। सूर्योदय होते समय पर नींद खुली। रात्रि की भांति दर्द ने भी शरीर से बिदा ले ली।

चोर हानि न कर सका

श्री कपिलदेव पाण्डेय, मिर्जापुर लिखते हैं—मेरे पड़ोस के श्री सदानन्द जी प्रशंनीय गायत्री उपासना करते हैं। एक दिन रात में उसके घर में चोर घुसा। उसके वस्त्रादि उठा ले गया। खड़खड़ सुन कर उसकी पत्नी की नींद टूट गयी और उसने पति को जगाया। आवाज सुन चोर भी शीघ्रता में भाग गया। उन लोगों ने देखा—वस्त्र गायब थे। पुनः वे लोग सो गये। उनकी पत्नी को स्वप्न हुआ। तुम्हारा वस्त्र चोर नहीं ले जा सका है। तुरन्त लैम्प जला कर खोजने से घर के पीछे सभी वस्त्र मिल गये।

पत्थरों की वर्षा से रक्षा

श्री गोकुलचन्द शर्मा, मोडक (कोटा) सपरिवार प्राण रक्षा की कृपा के बारे में लिखते हैं—कृष्णाष्टमी की दूसरी रात में हम लोग पति, पत्नी एवं बच्चों सहित एक कवेलपोश तिवारी के नीचे सो रहे थे। अचानक दरवाजे का पत्थर टूट जाने से वह पत्थर और उसके ऊपर का कवेल सभी एक साथ ही नीचे गिर पड़े, जिस पलंग और खाट पर हम लोग सोये थे वह चूर चूर हो गये। हमारे ऊपर भी कवेलों के ढेर थे, पर हम लोग बाल बाल सुरक्षित थे। सभी लोग गायत्री माता की आश्चर्य भरी रक्षा की सराहना कर रहे थे। हम लोग बाहर निकल कर कृतज्ञता के आँसुओं से भर रहे थे।

बुरे दिन पलट गये

पं० रामप्रसाद मिश्रा बेंदौलिया (बस्ती) अपना अनुभव लिखते हैं—पिताजी के पास १ हजार बीघा जमीन थी, काफी सम्पन्न थे, पर समय के कुचक्र में पड़ सब कुछ चला गया। घर भी फूट गया। झोंपड़े में रहने लगे। पेट को भोजन तक नसीब न होता। आखिर १६) मासिककी नौकरी की। वह भी बीमारी के कारण छूट गई। फिर सरयू तट पर गन्ना के रस की रखवाली के लिए दिन रात वहाँ रहना पड़ा जहाँ से तीन-तीन मील कोई गाव न था तथा पास

श्मशान घाट था। रात को अकेले रहने से बहुत डर लगता कण्डों के अभाव में लकड़ी जला कर रात काटनी पड़ती। विपत्ति जो करावे सो कम है।

एक रात को उस सुनसान जंगल में एक गेरुए वस्त्रधारी बाबा आ निकले। रात को उसी झोंपड़ी में ठहर गये। उनके पास एक पाव कोदों का चावल था जो मिट्टी की हाँडी में पकाया गया वही हम दोनों ने खाया। सवेरे चलते समय उनने मुझे गायत्री मन्त्र सिखाया और कहा बेटा यह मन्त्र सब सुख सम्पत्ति का दाता है। तू इसका जाप कर तेरे सब कष्ट मिटेंगे। मैंने उनकी आज्ञा शिरोधार्य की। उसी रोज से दिन फिर गये। खेतो में लाभ हुआ। बैल खरीदे। गिरवी रखी हुई जमीन छूटी। कर्ज चुकाया। मेरा विवाह हुआ, अच्छी नौकरी लगी। सब प्रकार को सुख शांति से घर भर गया। जहाँ रहता हूँ गायत्री का प्रचार करता हूँ।

मोटर का पहिया फिरने पर भी जीवन-रक्षा

श्री पूरनमल जी गौतम, कोटा से लिखते हैं— मैं मोटर ड्राइवर हूँ। गत मास सांगोद जाते समय भानाहेड़ा गाँव के पास एक दुर्घटना हुई। तीन औरतें आपस में ठठोली करती हुई सड़क पर चली जा रही थी। जैसे ही मोटर बराबर आई कि एक औरत ने दूसरी को धक्का मारा जो मोटर के पहिये के बिलकुल आगे आगई। मैंने बहुत बचाया मगर उस के मट-गार्ड की ठोकर लग ही गई और वह पहिये के नीचे आगई। मैंने सोचा एक पहिये के नीचे कुचली तो भी यदि पीछे के पहिये से बच जावे तो शायद इस की जान बच जाय। माता का नाम ले कर गाड़ी तेजी से घुमाई। लारी बबूल के पेड़ से टकराई। मैं बुरी तरह घबरा रहा था कि औरत भी मरी गाड़ी भी टूटी जब नीचे उतरा तो देखा कि वह औरत मोटर के नीचे से खुद ही निकल कर बाहर आ रही है। औरत के हाथ पैरों के जिन जेवरों पर हो कर पहिया गुजरा था वे तो टूट गये पर उसको जरा भी चोट न आई। लारी में ठसाठस भरी हुई सवारियों में से भी किसी का बाल बांका न हुआ। माता की इस कृपा को जितना धन्यवाद किया जाय कम है।

माता की कृपा के अनेक अनुभव

श्री भगवती प्रसाद तिवारी, बीना से लिखते हैं—गायत्री उपासना के बड़े प्रभावशाली अनुभव मुझे हुए हैं। कितने ही व्यक्तियों को इस महामन्त्र की उपासना की प्रेरणा मैंने दी है और उनको आश्चर्य जनक लाभ प्राप्त करते देखा है। कई वर्ष पूर्व मुझे लकवा हुआ था बड़ी भयङ्कर स्थिति थी वह भी मानसिक जप से बिलकुल अच्छा होगया। अब इस वृद्धावस्था में माता ने एक पुत्र दिया है। इस का संकेत कुछ दिन पूर्व माता ने मुझे दिया था और लड़के का क्या नाम रखा जाय यह भी मुझे नोट करा दिया था। माता की महानता पर मेरा अटूट-विश्वास है।

प्रेतात्मा को शांति

श्री रतनसिंह गोहेल मिठापुर (सौराष्ट्र) से लिखते हैं—गतवर्ष मेरे एक मित्र की मृत्यु मोटर दुर्घटना से हो गई थी। मुझे अनुभव हुआ कि उन की आत्मा अशान्त है और गायत्री उपासना का पुण्य फल चाहती है। मैंने उस आत्मा की शान्ति और सद्गति के लिए जप आरम्भ किया। बहुत दिन बाद फिर उस आत्मा का प्रत्यक्ष हुआ तो उस ने बताया कि उस गायत्री जप से उसे पूर्ण शान्ति मिली है उसकी एक कामना वासना जो और शेष थी उसे पूर्ण करने का भी प्रयत्न कर रहा हूं। गायत्री माता जीवित और मृत सभी को शान्ति देती हैं।

क्षय का दोष मर गया

श्री रामकुमार फरक्या रामपुरा से लिखते हैं— मुझे भयंकर क्षय हुआ था सेनेटोरियम में एक मित्रसे अखण्ड-ज्योति प्राप्त हुई। उससे प्रेरणा लेकर मानसिक गायत्री उपासना आरम्भ की। फल यह हुआ कि एक पैसे बराबर गोलाई की कैविटी जो अकसर दो-दो वर्ष में भी बन्द नही होती तीन मास में ही ठीक होगई। डाक्टर आश्चर्य से चकित रह गये।

* धर्मात्माओं के सराहनीय सत्प्रयत्न *

मणिनगर (अहमदाबाद) में चैत्र की नवरात्रि आयोजन के लिये उत्साह पूर्वक तैयारियां होरही है। अखण्ड कीर्तन, अखण्ड दीपक, रामायण के नौ पारायण, यज्ञ, प्रवचन आदि का कार्यक्रम बनाया गया है। —मिश्रीलाल कन्हैयालाल जोशी

गोविंदपुर (भागलपुर) में पं० द्वारिकाप्रसाद जी गोस्वामी के यहाँ एक बड़ा गायत्री यज्ञ हुआ। पं० मोतीलाल जी गोस्वामी जगेली निवासी का प्रभावशाली भाषण हुआ। बकिया, कुसुदपुर नया टोला, पकरा, परभेली आदि गाँवों में भी शाखाएं स्थापित की गई है।

गरोठ में शिवरात्रि के अवसर पर मा० कमला प्रसाद जी के प्रयत्न से सामूहिक यज्ञ हुआ। श्रद्धालु उपासक पर्याप्त संख्या में उपस्थित थे। यज्ञोपवीत संस्कार भी कराये गये। —हरीराम वैद्य

घासीपुरा (मुजफ्फरनगर) चौ• छोटासिंह के यहाँ सवालक्ष मन्त्रों से यज्ञानुष्ठान हुआ। गायत्री परिवार के सभी सदस्यों ने उसमें भाग लिया।
—बनारसी दत्त शर्मा

मुरादपुर माती (शाहजहाँपुर) में जप तथा यज्ञों का कार्यक्रम भली भाँति चल रहा है। तारीख २४ फरवरी को श्री० प्यारेसिंह वर्मा वैद्य ककरौआ के यहाँ यज्ञ हुआ। दूसरा पियरा में श्री० चंद्रिकाप्रसाद जी के यहाँ। --राम सहाय शर्मा

हथगाँव (फतेहपुर) में प्रतिदिन एक माला का हवन नियमित रूपसे चल रहा है। मन्त्रलेखन कार्यक्रम में प्रगति हो रही है। --जग मोहनलाल निगम

अमलार (सुजालपुर) में शिवरात्रि के अवसर पर गायत्री यज्ञ तथा रामायण पारायण हुआ। पं० श्रीनारायण प्रसाद शर्मा आदि सज्जनों का सहयोग सराहनीय था। --राधा किशन तिवारी

भगौनापुर (फतेहपुर) में सरयू प्रसाद जी के यहाँ यज्ञानुष्ठान पूर्ण हुआ। बड़ा आनन्द रहा। होली पर २४ हजार आहुतियों का हवन तथा अनेक व्यक्तियों के सामूहिक यज्ञोपवीत होने का आयोजन रखा गया है। --मोहनलाल वर्मा

मऊरानीपुर (झाँसी) में शिवरात्रि के अवसर पर सामूहिक गायत्री यज्ञ हुआ। नित्य यज्ञ का क्रम चल रहा है। यहां करीब १२५ महिलाऐं नियमित रूप से गायत्री चालीसा पाठ करती है।
—सालिगराम पाण्डेय

नाँदेमऊ (फर्रुखाबाद) में यदुनाथसिंह के यहां बड़े समारोह से पं० सिद्ध गोपाल जी द्वारा सम्पन्न कराया गया। --विश्वनाथ सिंह

करसरा में एक लक्ष आहुतियों का यज्ञ बहुत ही आनन्द पूर्वक हुआ। आरम्भ में जो भारी बाधाऐं दिखाई पड़ रहीं थी वे समय पर स्वयमेव शान्त हो गई। --देवराज भट्ट

तनौड़िया (शाजापुर) में २७ फरवरी को देव प्रतिमाओं की प्राण प्रतिष्ठा। कर्मकाण्डी पंडित जी द्वारा हुई। ४८ हजार जप तथा ३ हजार आहुतियों का हवन, रात्रि जागरण, चालीसा पाठ, भजन कीर्तन महाभोज आदि के बड़े प्रभावशाली आयोजन सम्पन्न हुए। --नन्दकिशोर कर्मयोगी

झाँसी में गायत्री यज्ञों की श्रृंखला बद्ध योजना चालू है प्रति रविवार को १००० आहुतियों के भिन्न भिन्न स्थानों में गायत्री यज्ञ होते हैं। नये सदस्य बनाये जाते हैं। शिवरात्रि को गायत्री यज्ञ बड़े ही उत्साह के साथ सम्पन्न हुआ। श्री पंडित शिवकुमार शास्त्री का यज्ञ से उपरान्त बड़ा मार्मिक भाषण हुआ। उपस्थिति जन समुदाय ने गायत्री यज्ञ तथा मन्त्र के महत्व को समझा तथा सदस्य बने।

—गिरजा शङ्कर [illegible]

पमीको (जमशेदपुर) में एक २४ लक्ष जप २४ हजार आहुतियों का सामूहिक अनुष्ठान पूर्ण हो चुका है अब वैसा ही संकल्प दुबारा चालू किया गया है। साप्ताहिक सत्संग बारी-बारी सदस्यों के यहां बड़े उत्साह पूर्वक होते हैं। —ज्ञानचन्द

जुल्मी (राजस्थान) के पं० रामकिशन शर्मा बड़े परिश्रम पूर्वक इस क्षेत्र में भ्रमण करके गायत्री उपासकों में उत्साह भर रहे हैं। बदरबान, हद्दा खेड़ा, चेचट, आलोद, राजपुरा आदि शाखाओं का कार्य बड़े आनन्द पूर्वक चल रहा है। आलोद तथा राजपुरा में बड़े बड़े यज्ञों की योजना चल रही है। —राम कुमार शर्मा

बुलन्द शहर जिले में कसेर कलां निवासी महात्मा ब्रह्म स्वरूप जी महाराज गायत्री प्रचार तथा शाखाओं की स्थापना में संलग्न हैं। इस मास उनके प्रयत्न से अनूप पुर, डिबाई, चरौरा, सम्भल, कसेर आदि स्थानों में गायत्री परिवारों की स्थापना हुई है। —ज्वाला प्रसाद शर्मा

खोराला (गीर) सौराष्ट्र में ब्रह्मचारी श्री० नर्मदा शङ्कर जोशी के प्रयत्न से गायत्री उपासना का बड़ा प्रचार हो रहा है। मन्त्र लेखन महायज्ञ के लिए वे बड़ी तत्परता पूर्वक कार्य कर रहे हैं। उपासकों का सच्चा सहयोग उन्हें मिल रहा है। —एक उपासक

गुलाब नगर बरेली के श्री गौरीशङ्कर मन्दिर में प्रत्येक रविवार को हवन तथा सत्संग का कार्यक्रम बड़े सुचारु रूप से चलता है। चैत्र की नवरात्रि में २४ हजार आहुतियों का हवन होगा। —यशोदानंदन मुनीम

ब्यावर में प्रति रविवार को दो हजार आहुतियों का हवन होता है। सन् ५७ तक यह हवन क्रम इसी प्रकार चलता रहेगा। श्री० मुकुन्द दास राठी ने गायत्री पुस्तकालय के लिये पूरे दो सौ मँगाकर दान दिये हैं। सेठ दुर्गाप्रसाद जी ने एक हजार चालीसा वितरण किए हैं। एक विशाल यज्ञ करने की योजना बन रही है। —मोहनलाल शर्मा

गुरुकुल बकानी (राजस्थान) में चैत्र सुदी १३, १४, १५ को एक बड़ा गायत्री यज्ञ होगा। श्री स्वामी जी महाराज इसकी तैयारी में संलग्न हैं। —भँवर लाल शर्मा

तारापुर श्री० जगन्नाथ मन्दिर में सामूहिक गायत्री अनुष्ठान बड़े आनन्द पूर्वक सम्पन्न हुआ। श्रीमती उज्वल देवी, अमृत देवी, सुकान्ती देवी का उत्साह देखने ही योग्य था। —गोकुल प्रसाद पंडा

मालेगाँव (नासिक) में स्वर्गाश्रम हरद्वार के तपस्वी श्री० गायत्री स्वरूप जी महाराज पधारे उनके सत्सङ्ग तथा प्रवचनों से स्थानीय जनता में गायत्री माता के प्रति अभिरुचि और भी बढ़ी है। —जगन्नाथ बद्रीनारायण भँवर

सुसनेर (शाजापुर) में बैसाख में एक बड़े यज्ञ की तैयारी हो रही है। आर्वी से पं० कृष्ण प्रसाद जी आयुर्वेदाचार्य इसमें पधारेंगे। गुदरावन के पं० दामोदर जी इस अवसर पर अपना नरमेध (सर्वस्व दान) करेंगे। —नन्दकिशोर शर्मा

ई० एस० डी० मन्दिर कांकीनारा (बङ्गाल) में गायत्री उपासना के लिए बड़ा उत्साह पैदा हुआ है। जप, हवन, स्वाध्याय सत्सङ्ग कार्यों में सदस्य गण बड़े चाव से भाग लेते हैं। —राम प्रसाद मिश्र

कुल्हार (बिदिया) में ता० ११ फरवरी को सूर्योदय से सूर्य अस्त तक अखण्ड गायत्री यज्ञ हुआ जिसमें सहस्रों ग्राम वासियों ने बड़े उत्साह से भाग लिया। खर्चा करीब ३००) पड़ा। जो अकेले लक्ष्मण प्रसाद जी ने ही दे दिया। पं० शिवकुमार जी शास्त्री का बड़ा प्रभावशाली प्रवचन हुआ। इस आयोजनको सफल बनानेमें पं०रामसहायजी तिवारी ने अधिक परिश्रम किया। —बालकृष्ण अग्रवाल

मझोला (नैनीताल) में होली की पूर्णिमा को एक सामूहिक गायत्री यज्ञ होगा। तैयारियां जोरों से हो रही हैं। —लक्ष्मण सिंह मनराल

गुदरावन (शाजापुर) में चैत्र सुदी ११ से पूर्णिमा तक पांच कुण्डों की यज्ञ शाला में सवालक्ष आहुतियों का यज्ञ होगा। २४ लक्ष जप भी उस समय तक पूर्ण हो जायगा। लगभग एक हजार रुपया एकत्रित हो चुका है। —बाबूलाल शर्मा

कुरावड़ (उदयपुर) में फाल्गुनी पूर्णिमा को सामूहिक यज्ञानुष्ठान होने जा रहा है। तदनुन्तर चैत्र की नवरात्रि में भी एक अच्छा आयोजन होगा। सफल बनाने में कई उपासक बड़ी श्रद्धा पूर्वक संलग्न हैं।

—जगन्नाथ प्रसाद शर्मा

झांसी में २० मार्च से ६ अप्रेल तक पाठ पारायण आयोजन श्री मन्दिर हनुमान जी, रेलवे क्वाटर वर्कशाप रोड, टेकनीकल स्कूल के सामने होगा। श्री० बाबा राघवदास जी इसका आयोजन कर रहे हैं। —रामसहाय तिवारी

बीना (सागर) में २४ लक्ष गायत्री अनुष्ठान की पूर्णाहुति तथा २४ हजार आहुतियों का आयोजन ता० ९ से १५ फरवरी को श्री० नरसिंह जी के मंदिर में हुआ। लगभग ४०० व्यक्तियों का ब्रह्म भोज हुआ। अनेकों धर्म प्रेमियों ने तन मन धन से सहयोग दिया। —शालिगराम दुबे

सांपन— [illegible] ([illegible]) बरार, में महावीर जी के स्थान पर सवालक्ष आहुतियों का गायत्री यज्ञ राम नवमी से लेकर चैत्र सुदी १५ तक सम्पन्न होगा। बाला जी के श्री० स्वामी शङ्करानन्द जी की कृपा से एक हजार रुपया इकट्ठा हो चुका है। तैयारी जोरों से हो रही है। —गोविंद नारायण मिश्र

दिगौरा (टीकम गढ़) में शिवरात्रि को अखण्ड व्रत, जप, हवन, पूजन, कीर्तन, रात्रि जागरण आदि कार्य क्रमों के साथ उत्सव श्री० मारकण्डेश्वर एवं श्री० प्रतापेश्वर स्थानों पर बड़े उत्साह पूर्वक मनाया गया। —बैजनाथ सोनकिया

अण्डा (जालौन) में सवालक्ष आहुतियों का हवन तथा १०८ चालीसा पाठ एवं सामूहिक अनुष्ठान का कार्यक्रम सानंद पूर्ण हुआ। ३०) का प्रसाद वितरण हुआ। कन्याओं को भोजन कराया गया।

—राम खिलावन द्विवेदी

तनोड़िया (शाजापुर) में ता० १० मार्च को दस हजार आहुतियों का हवन हुआ। पूर्णाहुति में उपस्थित सज्जनों ने अपने अपने कई दोष छोड़ने की प्रतिज्ञा की। श्री० सोनारसिंह का उत्साह सराहनीय रहा। —मुन्नालाल कनेरियन [illegible]

विक्रमपुर (बरेली) के निकट मलूकपुर के टोले पर निवास करने वाले गायत्री के परमोपासक महात्मा जी तथा चतुर्भुज जी गङ्गवार के सहयोग से इस क्षेत्र में गायत्री परिवार की कई शाखाएं स्थापित हुई हैं। जनता में बड़ा उत्साह है।

—प्र० भा० प्रताप शुक्ल

आकेली (मेड़ता) में शिवरात्रि के अवसर पर गायत्री मन्त्रों की सवालक्ष आहुतियों का हवन, गायत्री सहस्रनाम के एक हजार पाठ, श्री० ब्रह्मचारी देवेन्द्र कुमार जी की कृपा से पूर्ण सफलता पूर्वक पूर्ण हुए। चैत्र कृष्णा ५ को फिर ऐसा ही एक उत्सव होगा। —भँवरलाल दाधीच

अकलेरा (झालावाड़) शाखा में अब तक ८१ सदस्य बन चुके हैं। सत्सङ्ग एवं हवन का कार्यक्रम बड़े आनन्द से चलता है। गत बसंत पञ्चमी पर यहाँ एक २४ हजार यज्ञ होकर चुका है। अब हरनचाड़ा शाह जी में एक २४ हजार यज्ञ होने की तैयारी है। —सोहनचन्द पारीख

पेटलावद (झाबुआ) में श्री नीलकंठेश्वर मन्दिर पर श्री० रघुनाथसिंह गेहलोत ने कलश चढ़ाया। बाजारों में भव्य जुलूस निकला। श्री० दामोदार जी नागर के सहयोग से १०) के गायत्री चालीसा वितरण हो रहे हैं।

—सोमेश्वर चतुर्वेदी

काशीपुर (बदायूँ) में ता० १४-३ को पं० ओम प्रकाश शर्मा के संरक्षता में एक सामूहिक गायत्री हवन हुआ जिसमें समस्त गायत्री उपासकों ने बड़ी लगन से सहयोग दिया। दर्शनों की अपार भीड़ थी

—ॐ प्रकाश मित्तल

नवाबगंज (बरेली) शाखा के अब तक ६३ सदस्य बन चुके। इस मास १६१६ माला जप २६०८ चालीसा पाठ, २१७८४ मन्त्रलेखन हुये। अखण्ड जप पाठ, लेखन, दीपक, हवनका आयोजन बड़ा ही उत्साह वर्धक था। —प्रभा प्रताप शुक्ल

डुमरिया (भागलपुर) में ३ मार्च को सामूहिक गायत्री यज्ञ हुआ। सदस्यों की संख्या दिन-दिन बढ़ रही है। —पद्माकर झा.

एसावली (बदायूँ) में गत पूर्णिमाको सामूहिक हवन, कीर्तन एवं सत्सङ्ग का बड़ा सुन्दर आयोजन हुआ। भविष्य में यह क्रम और भी उत्साह के साथ चलेगा। —गायत्री प्रसाद गुप्ता

मऊ रानीपुर (झांसी) में शिवरात्रि को १५०० आहुतियों का यज्ञ हुआ। सदस्यों की संख्या ८५ हो चुकी है। —सालिगराम पाण्डेय

भगौनापुर (फतेहपुर) में २४००० आहुतियों का यज्ञ १३ मार्च को बड़े समारोह पूर्वक सम्पन्न हुआ। श्री पृथ्वीनाथ जी, हीरालाल जी, मेवालालजी के उपनयन संस्कार हुये। सठिगवाँ, पारादान, बिजोली, गजारी, सैठी, बहुरिहापुर आदि गाँवों के अनेक सज्जन पधारे थे। यज्ञ के अन्त में पं० बद्री प्रसादजी त्रिपाठी तथा श्री दयाशङ्कर वर्मा के विद्वता पूर्ण भाषण हुये। —मोहनलाल वर्मा

कानपुर में इस मास दो यज्ञ हुये। पहला श्री० बाबूराम अग्निहोत्री के यहाँ गोविंदनगर में, दूसरा शिवरात्रि पर स्टेट बैंक में। सदस्य संख्या बढ़ रही है। —अयोध्याप्रसाद दीक्षित

शोप (टोंक) में गायत्री आश्रम के उद्घाटन तथा व्यापक गायत्री प्रचार की तैयारी हो रही है। बालून्दा का गायत्री साधक सम्मेलन पूर्ण सफल रहा। यज्ञ, प्रवचन, गायत्री चालीसा तथा सहस्र नाम पाठ आदि कार्यक्रमों का उपस्थित व्यक्तियों पर बड़ा प्रभाव पड़ा। —शिवराम सिंह अध्यापक

गोवाखांड (रायगढ़) में इस मास गायत्री पुस्तकालय की स्थापना हुई। सौ रुपये की पुस्तकें, कुर्सी, गद्दी आदि की व्यवस्था हो गई। आगे और भी उन्नति होगी। —विश्वनाथ मिश्र

मनसूरपुर (मुजफ्फरनगर) शाखा के ६० सदस्यों द्वारा १६७०८ माला जप हुआ। हवन भी बराबर होते रहते हैं। कई साधनों के विधि पूर्वक अनुष्ठान चल रहे हैं। —बनारसी दत्त शर्मा

चपुन्ना (फर्रुखाबाद) में ४ हवन गायत्री आश्रम पर और ५ अन्य गांवों में कराये गये, गायत्री मन्दिर तथा आश्रम का सुन्दर फाटक बनाने का प्रबन्ध हो रहा है। —पातीराम त्रिपाठी

मझौरिया मठ (चम्पारन) में गत पूर्णिमा को २६०० आहुतियों का हवन हुआ। उपस्थिति काफी थी। यहाँ से लगभग ५० मील पैदल चल कर मार्ग में प्रचार करती हुई एक टोली गायत्री परिवार सम्मेलन में मथुरा पहुँचने की तैयारी कर रहा है। —नित्यानन्द शर्मा

मझिया (हरदोई) में गत मास सामूहिक अनुष्ठान तथा ११ मालाओं का हवन हुआ। —शिवराम दीक्षित

जोधपुर शाखा द्वारा इस मास आठ आयोजन हुये जिसमें सत्सङ्ग, प्रवचन, कीर्तन, ग्रंथ, पाठ, जप, हवन आदि के कार्यक्रम रहे। सरदारपुरा में एक देवी जी का गायत्री महा पुरश्चरण चल रहा है जिसकी पूर्णाहुति बड़े समारोह पूर्वक होगी। —कन्हैयालाल मिश्रा

महलवाला (मेरठ) में फागुन वदी ५ से यज्ञ चालू है जिसमें अब तक ८६८ मालाओं की आहुतियां हो चुकी हैं। श्री० स्वामी गङ्गानन्द जी तथा स्वामी योगानन्द जी, स्वामी कैलाश गिरि जी तथा पण्डित ब्रह्मदत्त जी आदि सज्जन बड़ी निष्ठा पूर्वक यज्ञ को सफल बनाने में संलग्न हैं।

आरङ्ग (रायपुर) शाखा के ७० सदस्यों द्वारा इस मास ८२६५ माला का जप, १५६८ गायत्री चालीसा पाठ २६६४८ मन्त्र लेख तथा ८०२ माला हवन सम्पन्न हुआ। सत्सङ्गों का क्रम बड़े उत्साह पूर्वक चलता है। —विद्या प्रसाद मिश्र

अलीगढ़, (लक्ष्मी पुरी) शाखा के ४० सदस्य बड़ी श्रद्धा पूर्वक साधना में संलग्न हैं। चैत्र की नवरात्रि में श्री० रामप्रकाशजी पलतानी के यहाँ

कुण्डों में २४ हजार आहुतियों का हवन होना निश्चय हुआ है। —श्रीराम पाण्डेय

मोरवी (सौराष्ट्र) में प्रतिमास छेला रविवार को गायत्री हवन, जप, सत्सङ्ग, ब्रह्मभोज आदि का कार्य क्रम श्री० करुणाशङ्कर जगजीवन जानी के यहाँ होता है। श्री० जीवन लाल हरीशङ्कर भट्ट, दुर्गाशङ्कर दवे, गायत्रीलाल मदनलाल जोशी, आदि सज्जनों के यहाँ भी हवन हो रहे हैं।

—करुणाशङ्कर जगजीवनजानी

करसरा (सतना) में अहीर क्षत्रियों के विशेष सहयोग से गङ्गा, गीता, गौ, गायत्री पूजन के साथ-साथ सवालक्ष आहुतियों का हवन पांच कुण्डों की यज्ञशाला में सम्पन्न हुआ। बड़ा आनन्द रहा।

—जगदीश प्रसाद भट्ट

उज्जैन में कुँभ के अवसर पर श्री० १०८ ब्रह्मचारी विश्व कल्याण हितैषी के तत्वविधान में १ मई से १५ मई तक गायत्री महायज्ञ तथा धर्म प्रचार की विशाल व्यवस्था रहेगी। तैयारी जोरों से हो रही हैं।

—गुरु प्रसाद वर्मा

खातोली (राजस्थान) के निकटवर्ती जोरारपुरा तथा गोपाल गञ्ज में दो गायत्री यज्ञ बड़े ही उत्साह वर्धक वातावरण २४-२४ हजार आहुतियों के सम्पन्न हुये। दो हजार आदमियों का ब्रह्मभोज हुआ। निमसरा निवासी श्री० बजरङ्गलालजी का प्रयत्न बड़ा सराहनीय था। गोठडा में श्री० लड्डू लाल जी के द्वारा चौबीस लाख आहुतियों का यज्ञ तथा एक हजार ब्राह्मण भोजन हुआ।

—गोस्वामी रामपुरी

तारापुर (उडीसा) में ता० १२ मार्च को सामूहिक गायत्री यज्ञानुष्ठान बड़े आनन्द से हुआ जिस में २० पुरुष और तीन महिलाओं ने भाग लिया।

—गोकुलप्रसाद पंडा

काली बावडी (धार) में ब्रह्मचारी श्री. सुरेशानन्दजी की प्रेरणा से ढाई लाख आहुतियों का यज्ञ सम्पन्न हुआ। श्री० ब्रह्मचारी जी के प्रयत्न से गायत्री उपासक यहाँ एक गायत्री मन्दिर बनवा रहे हैं। जिस के लिये मूर्ति खरीद ली गई है। प्राण प्रतिष्ठा जेष्ठ में होगी उसी समय २४ लक्ष का यज्ञानुष्ठान होगा। —गङ्गाप्रसाद श...

मोडक (राजस्थान) में ता० १५ मार्च को ... हुआ जिसमें आस पास के साधक आये थे। ... साधकों तथा २० साधिकाओं ने भाग लिया। ... का साहित्य माता शान्तिदेवी की ओर से वितर... हुआ। श्री० शंभूसिंह जी का भाषण हुआ। ब... आनंद रहा। —मांगीलाल व...

अमापुर (एटा) में ता० १८ मार्च को एक विशा... यज्ञ आयोजन हुआ। रात्रि को सत्सङ्ग हुआ जिस... पं० शिवनारायण जी पालीवाल के प्रवचन हुए।

—हरि ओ३म् गोपा...

महबूबा बाद (मान कोटा) में गायत्री परिवा... के सदस्य विशेष निष्ठा पूर्वक साधना में संलग्न हैं गत मास ४ सामूहिक हवन हुये। साप्ताहिक सत्सङ्ग का बड़ा उत्साह रहता है।

—विलासी राम लोहि...

खूँटी (राँची) में श्री० बनवारी लाल जी ... यहां फागुन सुदी १४ को एक हजार आहुतियों ... हवन हुआ। अनेकों गायत्री उपासक सम्मिलित थे।

— देवेन्द्रनाथ सा...

गणेश गञ्ज (टीकमगढ़) में ता० ६ मार्च को एक सामूहिक यज्ञ आयोजन हुआ। श्री० गिरज... सहाय जी खरे ने झाँसी से पधार कर महत्व पर प्रवचन किया। —जगतराम परसो...

माकडौन (उज्जैन) में वैशाख बदी ११, से अमावस तक २५ कुण्डों की यज्ञशाला में २४ लक्ष आहुतियों का विशाल यज्ञ होने की तैयारियाँ हो रही हैं। सभी गायत्री उपासकों को सादर—आमन्त्रण है। — ताराचन्द पालीवाल

झाँसी में आगामी १७, १८, १९ मई को २१ कुण्डों की यज्ञशाला में बृहद् गायत्री महायज्ञ तथा सवा करोड़ जप होगा। बुन्देलखण्ड गायत्री परिवार सम्मेलन का आयोजन किया गया है। प्रान्त भर की गायत्री संस्थाओं को आमन्त्रण भेजे जा रहे हैं। —बालकृष्ण अग्रवाल

निवार नदी तट पर आश्चर्यजनक यज्ञ

कटनी से १० मील दूर निवार नदी के किनारे महात्मा रघुनाथदासजी घोर जङ्गल में गायत्री तप करते हैं। उनकी कुटी पर अक्सर सिंह आते हैं और रात रात भर बैठे रहते हैं। यह महात्मा जी एक बार गायत्री तपोभूमि गये थे और आचार्य जी से मिले थे, उसी समय से वे इतने प्रभावित हुए कि अपने आश्रम पर एक बड़ा गायत्री यज्ञ कराने और आचार्य जी को बुलाने का निश्चय कर लिये। वह उनका सङ्कल्प २७, २८ फरवरी व १, २, ३ मार्च को पूर्ण हो गया। उसी घनघोर जङ्गल में ११ कुण्डों की विशाल यज्ञशाला में सवालक्ष आहुतियों का यज्ञ बड़ी ही सफलता पूर्वक सम्पन्न हुआ। आचार्य जी उस समय मथुरा में आवश्यक कारण उपस्थित होने से असमर्थ थे। महात्मा जी ने निश्चय किया कि—जब तक आचार्य जी न आ जावेंगे तब तक यज्ञ बन्द न होगा और वे अन्न ग्रहण न करेंगे। इस निश्चय की सूचना तार से आचार्य जी को दी गई और यज्ञ की तिथियाँ बढ़ा दी गई। सूचना पाते ही आचार्य जी आये, उत्सव बड़ा सफल रहा। जङ्गल में ऐसा मङ्गल देखकर लोगों के हृदय श्रद्धा से गद्-गद् हो रहे थे। प्रबन्ध तथा आर्थिक व्यवस्था में—कटनी, घनश्याम भण्डार के श्री० बैजनाथ जी बहरे का सहयोग अतीव सराहनीय रहा।

इस यज्ञ में स्वामी रघुनाथदासजी के तप प्रताप के कई चमत्कार—जिन्हें देख कर आश्चर्य से दङ्ग रह जाना पड़ा दर्शकों ने प्रत्यक्ष देखे। जैसे—(१) जिस समय घी के भण्डार में कमी पड़ गई उस समय बाबा ने कहा—जरा भी चिन्ता न करो पाँच मिनट में घी आ रहा है। सचमुच एक सर्वथा अपरिचित व्यक्ति घी के टीन लाकर यज्ञशाला में रख गया। (२) ब्राह्मण लोग जातिभेद का अडङ्गा लगा कर इस सार्वजनिक यज्ञ का बहिष्कार कर लौट चले। बाबा ने क्रुद्ध हो कर शङ्ख बजाया। तत्काल लाखों मधु-मक्खियाँ न जाने कहाँ से आकर उन लौटने वाले ब्राह्मणों को चिपट गई। वे व्याकुल होकर बाबा के पास वापिस लौटे, क्षमा मांगी और यज्ञ में शामिल हुये। (३) पूर्णाहुति होते ही बाबा ने सब को कहा अब तुरन्त सब लोग यहां से चले जाओ दो घण्टे बाद भारी वर्षा होगी। लोगों को विश्वास न होता था, पर जाना ही पड़ा। सचमुच ठीक दो घण्टे बाद भारी वर्षा हुई। ऐसी ही और भी अनेकों अन्य छोटी बड़ी आश्चर्यजनक घटनाएँ घटी।

—रामकृष्ण डेंगरे

महात्मा जी का आदर्श उत्साह।

सराय तरीन (मुरादाबाद) क्षेत्र में महात्मा ब्रह्मस्वरूप जी महाराज गायत्री प्रचार में प्राण प्रण के साथ संलग्न हैं उनके प्रयत्न से इधर कई महत्वपूर्ण कार्यक्रम सम्पन्न हो चुके हैं। यथा—

(१) १० मार्च को सराय तरीन में श्रीमती भगवती देवी के यहाँ यज्ञ-सम्मेलन तथा ब्रह्मभोज हुआ। सर्व श्री शिव नरायण रस्तोगी, राजेन्द्र जी रोहतगी इन्द्र, प० शिव शङ्करलालजी, श्रीमती मगन मूर्तिदेवी के प्रवचन हुए। महिला गायत्री परिवार की मन्त्री श्री मगन मूर्तिदेवी नियुक्त हुईं।

(२) ता० ११ को हयात नगर (संभल) में शाखा स्थापित हुई। सदस्य बने। श्री० दुर्गादेवी के भवन पर हवन तथा प्रवचन का कार्यक्रम हुआ।

(३) ता० १२ को श्री राजेन्द्रजी रोहतगी के यहाँ यज्ञ हुआ। जिसमें १५० पुरुषों तथा ५० स्त्रियों ने आहुतियों में भाग लिया। धर्म फेरी के लिये एक टोली निकली जिसने कई मील का दौरा करके २५ सदस्य बनाये एवं एक शाखा स्थापित की।

अब श्री० स्वामी ब्रह्मस्वरूपजी महाराज पं० हरि शङ्करजी श्रीमती दुर्गा देवी गौड़, गीता देवी गौड़, अशोक कुमारजी का एक डेपूटेशन गायत्री प्रचार के लिये जिले भर में भ्रमण करने निकला है। जिस समय यह टोली यहाँ से विदा हुई तो जनता की अपार भीड़ ने उस पर भारी पुष्प वर्षा की। गायत्री माता के जय जयकार से सारा नगर गूँज रहा था।

—इच्छापूर्ण गौड़